# जिनभाषित

वीर निर्वाण सं. 2533

विक्रम संवत् 1826, वै.सु.6, गुरुवार को माधोपुर में भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति की प्रेरणा से सं. नन्दलाल द्वारा प्रतिष्ठित तीर्थंकर चन्द्रप्रभु स्वामी की लाल बलुआ पत्थर (34.2 X 24.7 से.मी.) की प्रतिमा संप्रति, अल्बर्ट विक्टोरिया म्यूजियम, लन्दन (केट.451 आई.एस.) में संगृहीत

भाद्रपद, वि.सं. 2064 सितम्बर, 2007

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूल्य 15/-

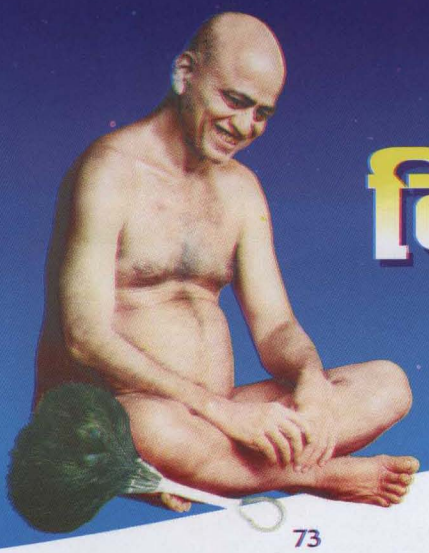

# आचार्य श्री विद्यासागर जी के दोहे

73

आप अधर मैं भी अधर, आप स्व वश हो देव।
मुझे अधर में लो उठा, परवश हूँ दुर्दैव॥

74

मंगल में दंगल बने, पाप कर्म दे साथ।
जंगल में मंगल बने, पुण्योदय में भ्रात!॥

75

धोओ मन को धो सको, तन को धोना व्यर्थ।
खोओ गुण में खो सको, धन में खोना व्यर्थ॥

76

त्रिभुवन - जेता काम भी, दोनों घुटने टेक।
शीश झुकाते दिख रहा, जिन-चरणों में देख॥

77

तोल तुला मैं अतुल हूँ, पूरण वर्तुल व्यास।
जमा रहूँ बस केन्द्र में, बिना किसी आयास॥

78

व्यास बिना वह केन्द्र ना, केन्द्र बिना ना व्यास।
परिधि तथा उस केन्द्र का, नाता जोड़े व्यास॥

79

केन्द्र रहा सो द्रव्य है, और रहा गुण व्यास।
परिधि रही पर्याय है, तीनों में व्यत्यास॥

80

व्यास केन्द्र या परिधि को, बना यथोचित केन्द्र।
बिना हठाग्रह निरख तू, निज में यथा जिनेन्द्र॥

81

वृषभ चिन्ह को देखकर, स्मरण वृषभ का होय।
वृषभ-हानि को देखकर, कृषक-धर्म अब रोय॥

82

काला पड़ता जा रहा, भारत का गुरु भाल।
भारी बढ़ता जा रहा, भारत का ऋण भार॥

83

वर्णों का दर्शन नहीं, वर्णों तक ही वर्ण।
चार वर्ण के थान पर, इन्द्र धनुष से वर्ण॥

84

वर्ण -लाभ से मुख्य है, स्वर्णलाभ ही आज।
प्राण बचाने जा रहे, मनुज बेच कर लाज॥

85

विषम पित्त का फल रहा, मुख का कडुवा स्वाद।
विषम वित्त से चित्त में, बढ़ता है उन्माद॥

86

कानों से तो हो सुना, आँखों देखा हाल।
फिर भी मुख से ना कहे, सज्जन का यह ढाल॥

87

दीप कहाँ दिनकर कहाँ, इन्दु कहाँ खद्योत।
कूप कहाँ सागर कहाँ, यह तोता प्रभु पोत॥

88

धर्म धनिकता में सदा, देश रहे बल जोर।
भवन वही बस चिर टिके, नींव नहीं कमजोर॥

89

बाल गले में पहुँचते, स्वर का होता भंग।
बाल, गेल में पहुँचते, पथ-दूषित हो संघ

90

बाधक शिव-पथ में नहीं, पुण्य कर्म का बन्ध।
पुण्य-बन्ध के साथ भी, शिव पथ बढ़े अमन्द॥

'पूर्णोदयशतक' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UPHIN/2006/16750

सितम्बर 2007 मासिक वर्ष 6, अङ्क 9

# जिनभाषित

**सम्पादक**
**प्रो. रतनचन्द्र जैन**

◆

**कार्यालय**
ए/2, मानसरोवर, शाहपुरा
भोपाल- 462 039 (म.प्र.)
फोन नं. 0755-2424666

◆

**सहयोगी सम्पादक**
पं. मूलचन्द्र लुहाड़िया, मदनगंज किशनगढ़
पं. रतनलाल बैनाड़ा, आगरा
डॉ. शीतलचन्द्र जैन, जयपुर
डॉ. श्रेयांस कुमार जैन, बड़ौत
प्रो. वृषभ प्रसाद जैन, लखनऊ
डॉ. सुरेन्द्र जैन 'भारती', बुरहानपुर

◆

**शिरोमणि संरक्षक**
**श्री रतनलाल कँवरलाल पाटनी**
(मे. आर.के.मार्बल)
किशनगढ़ (राज.)
**श्री गणेश कुमार राणा, जयपुर**

◆

**प्रकाशक**
सर्वोदय जैन विद्यापीठ
1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी,
आगरा-282 002 (उ.प्र.)
फोन : 0562-2851428, 2852278

◆

**सदस्यता शुल्क**

| | |
|---|---|
| शिरोमणि संरक्षक | 5,00,000 रु. |
| परम संरक्षक | 51,000 रु. |
| संरक्षक | 5,000 रु. |
| आजीवन | 1100 रु. |
| वार्षिक | 150 रु. |
| एक प्रति | 15 रु. |

सदस्यता शुल्क प्रकाशक को भेजें।

## अन्तस्तत्त्व

पृष्ठ

◆ **आचार्य श्री विद्यासागर जी के दोहे** आ.पृ. 2

◆ **सम्पादकीय** : 'सो संजमपडिवण्णो' (दंसणपाहुड/गा.२४) में 'संजम' के पूर्व अवग्रहचिह्न आवश्यक 2

◆ **काव्य**

- मुनिश्री क्षमासागर जी की कविताएँ आ.पृ. 3
- श्री ज्ञानाष्टकम् : मुनि श्री प्रणम्यसागर जी 16

◆ **लेख**

- जैन सन्तों का चातुर्मास : स्थापना और उद्देश्य : मुनि श्री समतासागर जी 5
- अहिंसाधर्म की महिमा : मुनि श्री नमिसागर जी 7
- णमो लोए सव्वसाहूणं : स्व. डॉ. लालबहादुर जी जैन शास्त्री 8
- मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो : पं० शिवचरण लाल जैन 10
- पर्युषण के दिव्य आकाश पर प्रदूषण के बादल : विधानाचार्य ब्र. त्रिलोक जैन 11
- दूरगामी परिणामों पर सोचें (दिल से) : अनन्त महादेवन, सुप्रसिद्ध फिल्म निर्देशक 14

◆ **जिज्ञासा-समाधान** : पं. रतनलाल बैनाड़ा 18

◆ **ग्रन्थसमीक्षा**

- इष्टोपदेशभाष्य एवं अध्यात्मयोगी मुनि श्री विशुद्धसागर जी : प्राचार्य पं. निहालचन्द्र जैन 20

◆ आचार्यश्री विद्यासागर जी एवं उनके शिष्य-शिष्याओं की चातुर्मास-भूमि 2007 24

◆ **समाचार** 29-32

**लेखक के विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।**
**'जिनभाषित' से सम्बन्धित समस्त विवादों के लिये न्यायक्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।**

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सम्पादकीय

# 'सो संजमपडिवण्णो' (दंसणपाहुड/ गा.२४) में 'संजम' के पूर्व अवग्रहचिह्न आवश्यक

आचार्य कुन्दकुन्दकृत 'दंसणपाहुड' की 24वीं गाथा इस प्रकार मुद्रित है-

**सहजुप्पण्णं रूवं दट्ठुं जो मण्णए ण मच्छरिओ।**
**सो संजमपडिवण्णो मिच्छाइट्ठी हवइ एसो॥**

(देखिये, 1.'अष्टपाहुड'/अनुवादक : पं. पन्नालाल जी साहित्याचार्य/प्रकाशक:श्री शान्तिवीर दि. जैन संस्थान, शान्तिवीरनगर, श्री महावीर जी (राज.)/ सन् 1968 ई.। 2. इसी का दूसरा संस्करण, प्रकाशक : भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत्परिषद्/सन् 1995 ई.। 3.'षट्प्राभृत'/टीकाकर्त्री : आर्यिका श्री सुपार्श्वमतिजी/प्रकाशिका : श्रीमती शान्तिदेवी बड़जात्या, केदार रोड, गौहाटी/ई. सन् 1989।)

उपर्युक्त गाथा से यह अर्थ प्रतिपादित होता है- ''जो संयमप्रतिपन्न (संयमी) मुनि, मुनियों के सहजोत्पन्न रूप अर्थात् यथाजात नग्नरूप को देखकर उसका आदर नहीं करता, बल्कि ईर्ष्या करता है, वह संयमप्रतिपन्न मुनि मिथ्यादृष्टि होता है।''

यह अर्थ असंगत है। दिगम्बरजैन-मत में सम्यग्दर्शनपूर्वक 28 मूलगुणों के निरतिचार पालक, नग्नवेशधारी मुनि को ही संयमी कहा गया है, अत: जो स्वयं सम्यग्दृष्टि, संयमी, (दिगम्बरमुनि) है, वह अपने ही समान सम्यग्दृष्टि, संयमी (दिगम्बरमुनि) को देखकर उनका अनादर और उनसे ईर्ष्या कैसे कर सकता है? यह तो अपने ही दिगम्बरवेश और संयम का अनादर है। अत: यह अर्थ स्वविरोधी और असम्भव होने के कारण असंगत है। इसके अतिरिक्त आचार्य कुन्दकुन्द ने दंसणपाहुड की 31वीं गाथा में **'सम्मत्ताओ चरणं'** कहकर सम्यग्दर्शन के सद्भाव में चारित्र अर्थात् संयम की उत्पत्ति बतलायी है। अत: पूर्वोद्धृत गाथा (दंसणपाहुड/24) में संयमी को मिथ्यादृष्टि कहा जाना भी असंगत है।

गाथा से इस स्वविरोधी, असंगत अर्थ के प्रतिपादित होने का कारण है मूल प्रति में लिपिकार द्वारा **'सोऽसंजमपडिवण्णो'** के स्थान में **'सो संजमपडिवण्णो'** ऐसा अवग्रहचिह्नरहित प्रयोग किया जाना और मुनियों तथा विद्वानों का इस पर ध्यान न जाना। आचार्य कुन्दकुन्द के अभिप्राय के अनुसार 'संजम' शब्द के पूर्व अवग्रह-चिह्न (ऽ) आवश्यक है। अवग्रहचिह्न होने पर गाथा इस प्रकार होगी-

**सहजुप्पण्णं रूवं दट्ठुं जो मण्णए ण मच्छरिओ।**
**सोऽसंजमपडिवण्णो मिच्छाइट्ठी हवइ एसो॥ 24॥**

और इससे निम्नलिखित अर्थ प्रतिपादित होगा-

''जो असंयमी पुरुष दिगम्बर जैनमुनि के नग्नरूप को देखकर उसका आदर नहीं करता, अपितु ईर्ष्या करता है, वह मिथ्यादृष्टि है।''

गाथा का यह अर्थ सुसंगत और कुन्दकुन्द के अभिप्राय के अनुरूप है, अत: गाथा में निर्दिष्ट स्थान पर अवग्रहचिह्न होना अनिवार्य है।

दिगम्बरजैन मुनियों के सहजोत्पन्न नग्नरूप का अनादर जैननामधारी सवस्त्रमुक्ति माननेवाले सम्प्रदाय के साधु तथा अन्य सवस्त्र साधु एवं गृहस्थ ही कर सकते हैं, यह स्पष्टीकरण **'दंसणपाहुड'** की **'अमराणवंदियाणं रूपं दट्ठूण'** इस 25वीं गाथा की टीका में श्रुतसागर सूरि ने किया है। यथा- **''तीर्थङ्करपरमदेवानां रूपं वेषं दृष्ट्वा---ये पुरुषा जैनाभासास्तथान्ये च गर्वं कुर्वन्ति---(ते) सम्यक्त्वरहिता भवन्ति मिथ्यादृष्टयो भवन्ति।''** और आचार्य



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुन्दकुन्द ने दंसणपाहुड में उसी 25वीं गाथा के बाद वस्त्रधारी पुरुष को असंयमी ही कहा है। यथा-

**असंजदं ण वन्दे वच्छविहीणोवि सो ण वंदिज्ज।**
**दुण्णि वि होंति समाणा एगो वि ण संजदो होदि॥ 26॥**

**अनुवाद**- असंयमी की वन्दना नहीं करनी चाहिए ओर जो वस्त्रविहीन होकर भी असंयमी है, वह भी वन्दना के योग्य नहीं है। वस्त्रधारी और वस्त्रविहीन-असंयमी दोनों समान होते हैं। उनमें से कोई भी संयमी नहीं है।

अपने इस वचन के अनुसार कुन्दकुन्द दिगम्बरजैन मुनियों के सहजोत्पन्न नग्नरूप का अनादर करनेवाले उपर्युक्त सवस्त्र-मुक्तिवादी साधुओं को संयमप्रतिपन्न अर्थात् संयमी नहीं कह सकते। अतः दंसणपाहुड की पूर्वोक्त 24वीं गाथा में '**सो संजमपडिवण्णो**' शब्द कुन्दकुन्द द्वारा प्रयुक्त नहीं हैं। कुन्दकुन्द ने '**सोऽसंजमपडिवण्णो**' ऐसा अवग्रहचिह्नयुक्त ही प्रयोग किया है।

किन्तु लिपिकार की भूल एवं विद्वानों के अनवधान से आज तक उक्त गाथा में अवग्रहचिह्नरहित '**सो संजमपडिवण्णो**' यही प्रयोग चला आ रहा है। यह अयुक्तियुक्त प्रयोग ईसा की 16वीं शती में अष्टपाहुड के टीकाकार भट्टारक श्रुतसागरसूरि को उपलब्ध प्रति में भी था। इसीलिए उन्होंने '**सो संजमपडिवण्णो**' इस असंगत प्रयोग की असंगतता पर ध्यान दिये बिना उसकी संगति बैठाने के लिए कुन्दकुन्द के अभिप्राय के सर्वथा विपरीत व्याख्या की है। उन्होंने '**संजमपडिवण्णो**' अर्थात् '**संयमप्रतिपन्न**' शब्द को उन भ्रष्ट दिगम्बरजैन मुनियों का सूचक मान लिया, जो 13वीं शताब्दी ई० में आचार्य वसन्तकीर्ति के उपदेश से आहारदि के लिए निकलते समय शरीर को चटाई, टाट आदि से ढक लेते थे। देखिए उनके शब्द-

"**सहजोत्पन्नं स्वभावोत्पन्नं रूपं नग्नं रूपं दृष्ट्वा यः पुमान् न मन्यते, नग्नत्वेऽरुचिं करोति, नग्नत्वे किं प्रयोजनं? पशवः किं नग्ना न भवन्तीति व्रते 'मच्छरिओ' परेषां शुभकर्मणि द्वेषी स पुमान् संयम प्रतिपन्नो दीक्षां प्राप्तोऽपि मिथ्यादृष्टिर्भवत्येव। अपवादवेषं धरन्नपि मिथ्यादृष्टिर्ज्ञातव्य इत्यर्थः। कोऽपवादवेषः? कलौ किल म्लेचछादयो नग्नं दृष्ट्वोपद्रवं यतीनां कुर्वन्ति तेन मण्डपदुर्गे श्री वसन्तकीर्तिना स्वामिना चर्यादिवेलायां तट्टीसारादिकेन शरीरमाच्छाद्य चर्यादिकं कृत्वा पुनस्तन्मुञ्चन्तीत्युपदेशः कृतः संयमिनामित्यपवादवेषः। तथा नृपादिवर्गोत्पन्नः परमवैरागयवान् लिङ्गशुद्धिरहितः उत्पन्नमेहनपुटदोषः लज्जावान् वा शीताद्यसहिष्णुर्वा तथा करोति सोऽप्यपवादलिङ्गः प्रोच्यते। उत्सर्गवेषस्तु नग्न एवेति ज्ञातव्यम्।**" (दंसणपाहुड/गा. 24)।

**अनुवाद**- दिगम्बरजैन मुनि का नग्नरूप स्वाभाविक रूप है। जो पुरुष उसे देखकर उसकी विनय नहीं करता, नग्नत्व को नापसन्द करता है, कहता है कि नग्नत्व में क्या रक्खा है, क्या पशु नग्न नहीं होते? वह पुरुष दूसरे की व्रतरूप शुभक्रिया से द्वेष करता है, वह पुरुष संयम को प्राप्त होते हुए भी, मुनिदीक्षा धारण करते हुए भी मिथ्यादृष्टि ही होता है। अर्थात् अपवादवेषधारी होते हुए भी उसे मिथ्यादृष्टि समझना चाहिए। अपवादवेष किसे कहते हैं? इस कलियुग में म्लेच्छ (भारत पर राज करनेवाले विदेशी आक्रान्ता) आदि जैन-मुनियों को नग्न देखकर उनपर उपसर्ग करते हैं। इसलिए मण्डपदुर्ग (मांडू) में श्री वसन्तकीर्ति स्वामी ने मुनियों को यह उपदेश दिया कि वे चर्यादि के समय चटाई, टाट आदि से शरीर ढँककर निकलें और चर्यादि करके उनका त्याग कर दें। यह अपवाद-वेष है। तथा नृपादिवर्ग में उत्पन्न जिन पुरुषों को परम वैराग्य हो गया है, किन्तु लिङ्ग (जननेन्द्रिय) में दोष होने के कारण नग्न होने में लज्जा आती है, अथवा शीतादिपरीषह सहने में असमर्थ हैं, वे भी (मुनिदीक्षा ग्रहण कर) वस्त्रधारण करते हैं। उनका यह लिङ्ग भी अपवादलिङ्ग कहलाता है। किन्तु उत्सर्गलिङ्ग तो नग्नता ही है, यह याद रखना चाहिए।"

इस प्रकार श्रुतसागरसूरि ने यह व्याख्या की है कि आचार्य कुन्दकुन्द ने दंसणपाहुड की 24वीं गाथा में



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उन दिगम्बरजैन श्रमणों को 'संयमप्रतिपन्न' अर्थात् संयमी कहा है, जो आचार्य वसन्तकीर्ति के उपदेश से म्लेच्छों के उपसर्ग से बचने के लिए अथवा राजादिवर्ग में उत्पन्न होने के कारण परीषहों एवं लज्जा से बचने के लिए नग्नता को छिपाने हेतु चटाई, टाट, वस्त्र आदि अपवादवेष धारण करने लगे थे।

श्वेताम्बर और यापनीय सम्प्रदायों में परीषहजय एवं लज्जाविजय में असमर्थ साधुओं के लिए 'स्थविर-कल्प' नाम से वस्त्रपात्रादिग्रहणरूप अपवादवेश की अनुमति दी गई है। इसी का अनुकरण कर भट्टारक श्रुतसागरसूरि ने आचार्य वसन्तकीर्ति द्वारा दिगम्बरजैन श्रमणों के लिए उपदिष्ट उपर्युक्त वेश को अपवादवेष या अपवादलिङ्ग की संज्ञा दी है। किन्तु किसी भी दिगम्बरजैन-आगम में किसी भी परिस्थिति में साधुओं के लिए, शरीराच्छादक अपवादवेष की अनुमति नहीं दी गयी है। और जिन कुन्दकुन्द ने वस्त्रधारी को तथा वस्त्रविहीन असंयमी को असंयमी कहा है तथा जो 'सुत्तपाहुड' में कहते हैं कि तिलतुषमात्र भी परिग्रह रखनेवाला साधु निगोद में जाता है-

**जहजायरूवसरिसो तिलतुसमित्तं ण गिहदि हत्थेसु।**
**जइ लेइ अप्पबहुयं तत्तो पुण जाइ णिग्गोदं॥ 18॥**

ऐसे कुन्दकुन्द इन तथाकथित अपवादवेषधारियों को 'संयमप्रतिपन्न' (संयमी) कह ही नहीं सकते, उनके वेष को 'अपवादवेष' नाम देने की तो बात ही दूर। और लाख बात की बात यह है कि आचार्य कुन्दकुन्द का अस्तित्व ईसापूर्व प्रथम शताब्दी के उत्तरार्ध से लेकर ईसोत्तर प्रथम शताब्दी के पूर्वार्ध तक था, जब कि उक्त अपवादवेश के उपदेशक आचार्य वसन्तकीर्ति ईसा की 13वीं शताब्दी में हुए थे। इसलिए आचार्य कुन्दकुन्द द्वारा वसन्तकीर्ति-उपदिष्ट चटाई-टाट-वस्त्रादिरूप, दिगम्बरत्व-विरोधी, परिग्रहमय, अपवादवेष धारण करनेवाले साधुओं को संयमप्रतिपन्न (संयमी) कहा जाना संभव ही नहीं है। अतः सिद्ध है कि दंसणपाहुड की 24वीं गाथा में '**सोऽसंजमपडिवण्णो**' पाठ ही है। इस पाठ से ही गाथा का अर्थ आचार्य कुन्दकुन्द के अभिप्राय के अनुरूप प्रतिपादित होता है।

श्रुतसागरसूरि द्वारा उक्त जिनागम-विरुद्ध व्याख्या किये जाने का एकमात्र कारण है लिपिकार द्वारा 'संजम' शब्द के पूर्व अवग्रहचिह्न का प्रयोग न किया जाना, जिससे '**असंयम-प्रतिपन्न**' की जगह '**संयमप्रतिपन्न**' पाठ हो गया और श्रुतसागरसूरि ने उसकी असंगतता पर विचार न कर उस असंगत पद की ही संगति बैठाने के लिए आगमविरुद्ध व्याख्या कर डाली। यदि वहाँ अवग्रहचिह्न होता तो, वे ऐसी आगमविरुद्ध व्याख्या न करते। अतः दंसणपाहुड की 24वीं गाथा में '**सोऽसंजमपडिवण्णो**' पाठ किया जाना चाहिए।

**रतनचन्द्र जैन**

**श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।**
**श्रेयो हि धीरोऽभिप्रेयसो वृणीते, प्रेयो मन्दो योगक्षेमाद् वृणीते॥**

कठोपनिषद्/१/२,२।

**अनुवाद**- 'आत्मसुख (मोक्षसुख) और इन्द्रियसुख दोनों मनुष्य के पास आते हैं। ज्ञानी मनुष्य इन्द्रियसुख की अपेक्षा आत्मसुख का वरण करता है और अज्ञानी आत्मसुख की अपेक्षा इन्द्रियसुख को चुनता है।'



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# जैन सन्तों का चातुर्मास

## स्थापना और उद्देश्य

**मुनि श्री समतासागर जी**
**आचार्य श्री विद्यासागर जी के शिष्य**

वर्ष में छह ऋतुयें हैं। जिनमें वर्षा, शीत और ग्रीष्म यह तीन मुख्य ऋतुयें हैं। इन तीनों ऋतुओं में प्राकृतिक रूप से वर्षा, शीत और ग्रीष्मऋतु की तीक्ष्णता रहती है। वर्षाऋतु श्रावण और भाद्रमास की रहती है जिसमें जलवृष्टि बहुतायत रहती है। वर्षा के कारण अनगिनत सूक्ष्म-स्थूल जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। कीचड़ और हरियाली से मार्ग व्याप्त हो जाता है। नदी नाले पानी से भर जाते हैं। आवागमन के मार्ग प्रासुक और निरापद/निराकुल नहीं रह पाते। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर ही अहिंसा के पालक करुणावान् सम्यक्चारित्री साधुजन एक जगह रुककर अपना स्वाध्याय और आत्म-साधना करते हैं। जैनशास्त्रों के अनुसार मूलत: यह वर्षायोग दो माह का होता है किन्तु मार्ग की प्रासुकता और नदी नालों के जलप्रवाह को थमने में एक-डेढ़ माह और लग जाता है। अत: इस वर्षायोग को श्रमणपरम्परा में आषाढ़ सुदी चतुर्दशी से प्रारंभ कर कार्तिकवदी अमावस्या तक माना जाता है। इसी वर्षायोग को जनसामान्य चातुर्मास के नाम से जानते हैं। जिसे आषाढ़ माह की अष्टान्हिका से कार्तिक माह की अष्टान्हिका अर्थात् चार माहों की समयावधि से लगाकर चातुर्मास शब्द का प्रयोग करते हैं। मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध संघ में मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक आदि इन दिनों किसी नगर, उपनगर ग्राम या तीर्थक्षेत्र आदि पर रुक जाते हैं। साधु सन्तों के रुकने का यह एक दीर्घकालीन प्रवास रहता है। जिसमें त्यागी तपस्वी जनों को पठन-पाठन, लेखन, स्वाध्याय, साधना आदि के लिए दीर्घकालीन समय मिल जाता है और उनसे धर्मलाभ लेने के लिए श्रावक समाज को भी लम्बे प्रवास का अच्छा अवसर मिलता है। इसलिए इस वर्षायोग के लिए श्रावक और साधु उभयपक्षों की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है।

कृषि कार्य करने वाला किसान जैसे अपनी आजीविका चलाने के लिए वर्षाकाल की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से करता है क्योंकि उससमय का उसका उद्यम ही उसके वर्षभर का प्रमुख आधार है, ठीक इसीतरह धर्मामृत पिपासु श्रावक और साधकजन इस वर्षायोग के लिये प्रतीक्षारत रहते हैं। इसलिये कहा गया है कि यह समय कृषि और ऋषि कार्य करने के लिए सर्वोत्तम है। वैसे भी भारतीय संस्कृति में सभी परम्पराओं में यह श्रावण और भादों का महीना विशिष्ट पर्व त्योहारों से भरा हुआ है अत: इन दिनों हर तरफ अलग ही उल्लास का वातवरण दिखता है। साथ ही व्यवसाय की मन्दता और विवाहादि गार्हस्थिक कार्यो का अभाव भी रहता है इसलिए भी भक्ति, पूजा और स्वाध्याय, प्रवचन आदि का धर्मलाभ निराकुलता से लेते हैं। वैसे भी भारत के अतीतयुग में वर्षा के चार महीनों में विशेष प्रयोजन के बिना देशान्तर गमन स्थगित रहता था। राजाओं के युद्धप्रयाण एवं व्यापारियों के व्यवसाय निमित्त से होने वाले देशान्तर गमन वर्षा के अन्त में ही होते थे। इसतरह से यह चातुर्मास का अवसर वर्षभर की धर्मप्रभावना का केन्द्र बिन्दु बन जाता है। इन दिनों में व्रत, उपवास और पूजा, विधानादि के अनुष्ठान करके श्रावक-समाज धर्म की प्रभावना बढ़ाती है तो वहीं मुनिसंघों से धर्म-देशना पाकर आहार, विचार, व्यवहार और व्यापार में शुद्धता लाने का प्रयास भी करती है। मेरी समझ से चातुर्मास की सबसे बड़ी उपलब्धि यही रहती है कि इन चार माहों में आहार, विचार, व्यवहार और व्यापार की शुद्धि जुड़ जाती है। यही शुद्धता ही गृहस्थ के जीवन में चातुर्मास वर्षायोग की सार्थकता प्रदान करती है। वास्तव में साधुसंघ के प्रवास का सच्चा लाभ तो यही है कि हमारे जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो। हमारा जीवन रूपान्तरित हो। फिर हमें किसी से यह कहने की आवश्यकता न पड़े कि हमारे यहाँ मुनिसंघ का चातुर्मास हो रहा है बल्कि आपके आचरण-व्यवहार को देखकर ही व्यक्ति आपोआप समझने लगे कि इनके नगर में मुनिसंघ विराजमान है। इन्होंने उनके सामीप्य/सेवा का लाभ सचमुच ही लिया है। श्रावक समाज इन दिनों मुनि संघों की परिचर्या में सहायक बनकर अपनी सेवाभावना से धर्म की प्रभावना करती है। इसलिए तो वर्षाकाल के इस वातावरण को ध्यान में रखकर कबीरदास जी ने लिखा है-

**कबिरा बदली प्रेम की हमपे बरखा आई।**
**अन्तर भीगी आत्मा हरी भरी वनराई॥**

प्रेम की बदली आने से जो वर्षा होती है उससे



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हृदय तो भीग ही जाता है समूची धरती भी हरी भरी हो जाती है। ठीक इसीतरह इस वर्षावास में झरने वाली गुरुवरों की प्रेम करुणामयी धर्मदेशना से प्राणिमात्र का हृदय भीग जाता है और जीवन धर्मसंस्कारों से हरा भरा हो जाता है। आगम शास्त्रों के अनुसार वर्षायोग की स्थापना करने के लिए क्षेत्रकाल की पूर्वापर परिस्थितियों का विचारकर श्रावक समाज से सहमति लेकर चातुर्मास-स्थापना की घोषणा की जाती है। तत्पश्चात् श्रावकगण मंगलकलश स्थापन और दीपप्रज्ज्वलन करते हैं। मुनिसंघ आगमविहित अपना भक्तिपाठ करके चातुर्मास की विधि सम्पन्न करते हैं। मुनिसंघ को स्वाध्याय हेतु शास्त्र भेंट किये जाते हैं। मुनि संघ का चातुर्मास के संदर्भ में उपस्थित जन समुदाय को धर्मोपदेश प्राप्त होता है। जिस दिन चातुर्मास का स्थापन होता है उस दिन मुनिगण अपना उपवास रखते हैं। जिस स्थान पर श्रावकों को इस वर्षायोग के समय त्यागी, व्रती, मुनि, आचार्यों का समागम मिल जाता है वहाँ के श्रावक जन अत्यन्त उत्साहचित्त आनन्दित रहते हैं। अपने नगर में इस समागम को पाने के लिए श्रावकगण बार-बार मुनि संघों के पास जाकर निवेदन करते हैं, उन्हें लाने का प्रयास करते हैं और जिस किसी नगर में चातुर्मास का सुयोग बन जाता है तो श्रावक समाज पूरे चार माह उसे उत्सव का रूप दे देती है। इसतरह से हर दृष्टि से वर्ष के इन चार माहों का महत्त्व है। इस परम पुनीत चातुर्मास के पावन क्षणों में हम अपनी हृदयभूमि को उर्वरा करें ताकि उसमें बोए गए धर्म-संस्कार के बीज भक्ति, विनम्रता और आध्यात्मिकता के फलों से जीवन को समृद्ध कर सकें।

# भगवान् मुनिसुव्रतनाथ

जम्बूद्वीप संबंधी भरतक्षेत्र के मगध देश में एक राजगृह नाम का नगर है। उसमें हरिवंश शिरोमणि सुमित्र नाम के राजा राज्य करते थे। उनकी महारानी का नाम सोमा था। आश्विन् शुक्ला द्वादशी के दिन उस महारानी ने प्राणत स्वर्ग के इन्द्र को तीर्थंकर सुत के रूप में जन्म दिया। श्री मल्लिनाथ तीर्थंकर के बाद जब चौवन लाख वर्ष बीत चुके तब मुनिसुव्रतनाथ भगवान् का जन्म हुआ था, उनकी आयु भी इसी अन्तराल में शामिल थी। उनकी आयु तीस हजार वर्ष की थी, शरीर की ऊँचाई बीस धनुष तथा कान्ति मयूर के कण्ठ के समान नीली थी। कुमारकाल के सात हजार पाँच सौ वर्ष बीत जाने पर वे राजपद को प्राप्त हुए। इसप्रकार जब उनके पन्द्रह हजार वर्ष बीत गये तब किसी दिन गर्जती हुई घन-घटा के समय उनके यागहस्ती ने वन का स्मरण कर खाना पीना बन्द कर दिया। महाराज मुनिसुव्रतनाथ अपने अवधिज्ञान से उस हाथी के मन की सब बातें जान गये। इसीकारण से उन्हें आत्मज्ञान हो गया जिससे वे अपने पुत्र युवराज विजय के लिए राज्य देकर नील नामक वन में पहुँचे और वहाँ बेला का नियम लेकर वैशाख कृष्ण दशमी के दिन सायंकाल के समय एक हजार राजाओं के साथ दीक्षित हो गये। पारणा के दिन वे मुनिराज राजगृह नगर में गये। वहाँ सुवर्ण के समान कान्तिवाले वृषभसेन राजा ने उन्हें आहारदान देकर पञ्चाश्चर्य प्राप्त किये। इस तरह छद्मस्थ अवस्था के ग्यारह माह बीत जाने पर वैशाख कृष्ण नवमीं के दिन शाम के समय अपने दीक्षावन में बेला का नियम लेकर चम्पक वृक्ष के नीचे ध्यानलीन हुए और घातिया कर्मों का क्षयकर केवलज्ञान प्राप्त किया। भगवान् के समवशरण की रचना हुई जिसमें तीसहजार मुनि, पचासहजार आर्यिकायें, एक लाख श्रावक, तीन लाख श्राविकायें, असंख्यात देव-देवियाँ और संख्यात तिर्यंच थे। धर्म का उपदेश देते हुए उन्होंने चिरकाल तक आर्यक्षेत्र में विहार किया। जब उनकी आयु एक माह की शेष रह गई तब सम्मेदशिखर पर जाकर उन्होंने एक हजार राजाओं के साथ प्रतिमायोग धारण किया और फाल्गुन कृष्ण द्वादशी के दिन रात्रि के पिछले (प्रदोष काल) भाग में अघातियाँ कर्मों का नाश कर मोक्ष प्राप्त किया।

**मुनि श्री समतासागरकृत**
**'शलाका पुरुष' से साभार**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# अहिंसा धर्म की महिमा

मुनि श्री नमिसागर जी
संघस्थ- पू.आ.श्री विद्यासागर जी महाराज

यह तो सर्वविदित है कि जैनधर्म में अहिंसा का स्थान सर्वोपरि है। इस अवसर्पिणी काल में भगवान् ऋषभदेव ने जिस अहिंसा धर्म का उपदेश दिया था उससे विश्व का कितना उपकार हुआ है, यह बताने के लिए शब्द नहीं मिलते। लाखों करोड़ों निरीह जीवों की रक्षा हुई, खून की नदियों का बहना रुका। भगवान् ऋषभदेव की इस अहिंसा का प्रभाव अन्य धर्मों पर पड़ा यह भी इतना ही सत्य है। प्रस्तुत लेख में हम यही देखेंगे कि अन्य धर्मों पर अहिंसा का प्रभाव कैसे पड़ा है।

एक प्रसंग आता है महाभारत का जिसमें अहिंसा धर्म की महिमा गायी गई है। प्रसंग है शान्ति पर्व, अध्याय 265 का भीष्म पितामह धर्मराज युधिष्ठिर से कहते हैं- युधिष्ठिर! प्राणियों पर दया करना चाहिए ऐसा राजा विचख्नु ने प्रजा पर अनुकम्पा से कहा था, जिसका उल्लेख विद्वान् करते हैं, मैं उसे कहता हूँ, सुनो! गवालम्भनयज्ञ के समय कटे हुए गले से युक्त एक बैल को देखकर यज्ञशाला में रहने वाली गायें बहुत ही विलाप कर रही थी जिसे राजा विचख्नु ने देखा। प्राणी हिंसा चलते समय 'स्वस्ति गोभ्यो स्तु लोकेषु' लोक में रहने वाली सभी गायों का मंगल हो, ऐसा सुभाशीष राजा ने कल्पित किया। साथ में राजा ने अपने द्वारा उच्चारित इस सुभाशीष का विवरण भी बनाया।

''जो धर्म की मर्यादा से भ्रष्ट हुए हैं, जो मूर्ख हैं, नास्तिक हैं, आत्मा के विषय में संदेह युक्त हैं, जो अप्रसिद्ध हैं- मात्र वे ही हिंसा का समर्थन करते हैं॥ 4॥ धर्मात्मा मनु ने सभी कर्मों में अहिंसा का ही प्रतिपादन किया है। लोग अपने आशाओं की पूर्ति के लिए बहिर्वेदी में पशुओं की बलि देते हैं॥ 5॥ इसलिए विद्वानों को वैदिक प्रमाणों के द्वारा सूक्ष्म धर्म का निर्णय करना चाहिए। सभी प्राणियों को सभी धर्मों में अहिंसा धर्म ही श्रेष्ठ है ऐसा विद्वानों का अभिप्राय है॥ 6॥ उपवास करते हुए कठिन व्रतों का आचरण करना चाहिए। सकाम कर्मों को अनाचार कर्म समझकर उनमें प्रवृत्त नहीं होना चाहिए। क्षुद्र लोग ही फलेच्छा से कर्म करते हैं॥ 7॥ जो मनुष्य वृक्षों को नहीं काटता, मांस नहीं खाता। यज्ञ के यूपस्तम्भ के लिए वृक्षों को काटता है। यज्ञांग के रूप में उपयोग किये हुये मांस को प्रसाद के रूप में खाता है- ऐसा यह वाद समीचीन नहीं दिखता, क्योंकि इसप्रकार के हिंसाधर्म की कोई भी प्रशंसा नहीं करता॥ 8॥ सुरा, मछली, शहद, मांसमय, कृसरौदन? इन सबको धूर्तों ने प्रवर्तित किया है। वेदों में इनको नहीं बताया गया है॥ 9॥ उन धूर्तों ने अभिमान, लोभ, मोह इनके वशीभूत होकर लोलुपता के लिए सुरा, मस्त्य, मधु, मांस को कल्पित कर लिया॥ 10॥ पूर्वार्द्ध॥ इसके बाद युधिष्ठिर प्रश्न करते हैं पितामह! कट्टर अहिंसावादी के शरीर और विपत्ति दोनों परस्पर संघर्ष करते हैं। चोर जब घर में प्रवेश करता है तब उसको पकड़कर सजा देना चाहिए ऐसा मन कहता है। लेकिन दूसरे व्यक्ति की हिंसा होने के कारण चोर को नहीं पकड़ना चाहिए ऐसा कट्टर अहिंसावादी का मन ही पुनः कहता है। इसप्रकार आपत्काल में शरीर का शोषण होता है। उससे बचकर आपत्ति का नाश करना चाहिए ऐसा शरीर कहता है। आपत्ति का निवारण करने के लिए हिंसा होती है। भूमि में रहनेवाले कृमि कीटादिकों की हिंसा होगी इस भय से कृषि को ही नहीं करें तो, काम नहीं करनेवाले का जीवन निर्वाह किस प्रकार होगा?''

इसके उत्तर में भीष्म जी कहते हैं- ''युधिष्ठिर! हिंसा नहीं करना चाहिए ऐसा कहने पर कृषि को ही छोड़ देना चाहिए ऐसा नहीं। अहिंसाधर्म का परिपालन करते समय भी शरीर क्षीण न हो, अकाल मृत्यु के वश न हो इसप्रकार कर्मों को करना चाहिए। जिसके पास शरीर सामर्थ्य है वही धर्म का आचरण कर सकता है।''

अब पाठक समझ गये होंगे की अहिंसाधर्म का महत्त्व कितना है? साथ ही साथ जैनों को गर्व होना चाहिए कि अन्य धर्मों में जो अहिंसा का वर्णन है वह भगवान् 'ऋषभदेव' जो कि जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर हैं का ही प्रभाव है। अहिंसा के महत्त्व को वे देर से समझे लेकिन समझ गये। महाभारत के इस प्रसंग से यह स्पष्ट हो जाता है कि जो व्यक्ति धर्म की मर्यादा से भ्रष्ट है, मूर्ख है, नास्तिक आदिक है वही हिंसा का समर्थन करता है। इससे एक प्रश्न का उठना स्वाभाविक है कि वेदों में अश्वमेध गोमेधादि यज्ञों का प्रतिपादन क्यों किया गया है? इसका उत्तर यह है कि वेद एक सांकेतिक हैं, उनको इतिहास के रूप में पढ़ने से यह गड़बड़ी हुई है। इसके लिए मैं एक ही प्रमाण देना चाहता हूँ। जिसे चंपतराय जैन साहब ने अपनी पुस्तक 'द की आप नॉलेज' में उल्लेख किया है। डियुसन साहब की पुस्तक 'सिस्टम ऑफ द वेदानां' जिसका अंग्रेजी अनुवाद चार्ल्स जॉनस्टन ने किया है, जिसमें लिखा है- 'Here the universe takes the place of the horse to be offered, perhaps with the thought in the background, that the ascetic is to renounce the world. (cf. Brit 3, 5, 1, 4, 4,22) ....' बृहदारण्यक के इस उल्लेख से यह स्पष्ट है कि अश्व (घोड़ा) की बलि देने का अर्थ है कि विश्व का त्याग करना (परिग्रह का त्याग करना) है, न कि जीवित घोड़ों की बलि देना। इसप्रकार हम समझ सकते हैं कि वेदों का अर्थ करने में कैसी गलती हुई है। ऐसे अनेक उल्लेख हम इस पुस्तक में देख सकते हैं, जो बलि के सच्चे अर्थ को प्रकट करते हैं।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# णमो लोए सव्वसाहूणं

स्व. डॉ. लालबहादुर जी जैन शास्त्री

जैनों में नमस्कार मंत्र की बड़ी महिमा है तथा इसे अनादिनिधन मन्त्र स्वीकार किया है। यहाँ तक कि समस्त अनादिनिधन श्रुत के अक्षर भी इसमें समाविष्ट हैं। पूजन के प्रारम्भ से इस मन्त्र की स्तुति का भी निर्देश है। ''पवित्र या अपवित्र अवस्था में भी जो इस मन्त्र का ध्यान करता है वह सब पापों से छुटकारा प्राप्त करता है अच्छे या बुरे स्थान में हो अथवा किसी भी अवस्था में हो, इस मन्त्र का स्मरण करने वाला भीतर-बाहर सदा पवित्र है। यह मन्त्र कभी किसी अन्य मंत्र से पराजित नहीं होता, सम्पूर्ण विघ्नों का नाशक है और सभी मंगलों में प्रथम मंगल है।'' इसप्रकार मन्त्र के माहात्म्य को देखकर प्रत्येक श्रावक साधु इस मंत्र का स्मरण करता है। शास्त्रों में तो यहाँ तक लिखा है कि चलते-फिरते, उठते-बैठते, आते-जाते सदा इस मन्त्र का स्मरण करना चाहिए। जैनों में जितने भी सम्प्रदाय हैं वे सभी इस मंत्र का समादर करते हैं। धर्मध्यान के भेदों में पदस्थ नाम का भी एक धर्मध्यान है। इस ध्यान में णमोकार मंत्र के पदों को लेकर ध्यान किया जाता है। आचार्य नेमिचन्द्र लिखते हैं-

**पणतीससोलछप्पण चदुदुगमेगं च जवह ज्झाएह।**
**परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण॥**

अर्थात् परमेष्ठी के वाचक पैंतीस, सोलह, छः, पाँच, चार, दो और एक अक्षर रूप मन्त्र पदों का ध्यान करना चाहिए।

ऐसे महामन्त्र को लेकर आज अनेक लोग उसके शुद्ध-अशुद्ध होने की चर्चा करते हैं। यद्यपि लिखावट या छापे की अशुद्धि से अशुद्धि का आ जाना कोई बड़ी बात नहीं है। वे अशुद्धियाँ किसी प्रकार शुद्ध की जा सकती हैं। लेकिन मूलतः ही मंत्र को अशुद्ध मानकर उसको शुद्ध करने का प्रयत्न करना वैसा ही है जैसे काई टिटहरी चित्त लेटकर अपने चारों पैरों से आकाश को गिरने से रोकने का प्रयत्न करे। सुना है जैनों के एक सम्प्रदाय में इस पर बड़ी चर्चा चली कि इस मंत्र का अन्तिम पद अशुद्ध है। अन्तिम पद है- ''णमो लोए सव्वसाहूणं'' का अर्थ है लोक में सब साधुओं को नमस्कार हो। इस पर किन्हीं लोगों का कहना है कि यहाँ साधु के लिए ''सव्व'' विशेषण उचित नहीं है क्योंकि ''णमो लोए सव्वसाहूणं'' का अर्थ होता है लोक में सब साधुओं को नमस्कार हो। इसका अभिप्राय यह हुआ कि लोक में जितने भी साधु हैं। चाहे वे दिगम्बर, श्वेताम्बर हों, रक्ताम्बर हों, पीताम्बर हों, जटाधारी हों, मुंडित हों, कापालिक हों या किसी भी वेष के धारण करने वाले हों उन सबको नमस्कार है। जबकि आचार्य समन्तभद्र के अनुसार-

**'' श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागम तपोभृताम्।**
**त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम्॥''**

अर्थात् जो सच्चे देव-शास्त्र-गुरु हैं उनका तीन मूढ़ता रहित आठ मद रहित, तथा अष्टाङ्ग सहित श्रद्धान करना सम्यग्दर्शन है। लेकिन जब सब साधुओं को नमस्कार किया जाता है इससे झूठे देव-शास्त्र-गुरु का निरसन नहीं होता। अतः यह ''सव्व'' पद नहीं होना चाहिए। इस पर कुछ लोगों का कहना है कि साधु कहा ही उसे जाता है जो २८ मूलगुणों को धारण करता है। अतः ''णमो लोए सव्वसाहूणं'' का अर्थ होता है, ''लोक में सम्पूर्ण २८ मूलगुणधारियों (साधुओं) को नमस्कार है।

इसके उत्तर में पूर्व पक्ष का कहना है कि यदि ''सव्व साहूणं'' से मतलब उक्त जैनसाधुओं से है तो फिर सभी जगह अर्थात् पांचों परमेष्ठियों में भी सव्व विशेषण प्रयोग होना चाहिए। फिर तो णमोकार मंत्र का रूप इसप्रकार होगा ''णमो सव्व अरिहंताणं, णमो सव्व सिद्धाणं, णमो सव्व आयरियाणं'' इत्यादि।

उत्तर पक्ष इसका उत्तर इसप्रकार देता है कि ''सव्व'' विशेषण को पाँचों परमेष्ठियों में लगाने की आवश्यकता नहीं है। ''सव्वसाहूणं'' के साथ जो सव्व विशेषण है उसी को सब जगह पाँचों परमेष्ठियों के साथ लगा लेना चाहिए। पर यह उत्तर भी समुचित नहीं बैठता। ''सव्व'' शब्द यदि अरिहन्त शब्द के साथ प्रयुक्त होता तो बाद में सब परमेष्ठियों के साथ लग सकता था। परन्तु जब वह स्पष्ट अन्तिम साधुपद का विशेषण है तो उसे पिछले सभी पदों का विशेषण माना जाय यह कुछ युक्तियुक्त नहीं लगता।

अतः वास्तविक स्थिति क्या है उसका हम यहाँ खुलासा करते हैं-

परमेष्ठी पांच हैं अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु। इनमें अरिहन्त परमेष्ठी के अन्तर्गत कोई किसी प्रकार का भेद नहीं है। जब भेद नहीं है तब वहाँ ''सव्व''



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विशेषण की कोई सार्थकता नहीं है। अरिहन्तों के ४६ मूलगुण होते हैं वे ४६ मूलगुण सबमें एक ही प्रकार के होते हैं कम अधिक नहीं होते। जो जिस मूलगुण का रूप है वही सभी अरिहंतों के सभी मूलगुणों का रूप है अत: अरिहंत व्यक्तिरूप में अनेक हैं किन्तु गुणों के रूप में सब एक ही हैं। अत: अरिहंतों को नमस्कार हो इसमें सभी अरिहंत व्यक्ति अन्तर्भूत हो जाते हैं अत: वहाँ ''सव्व'' शब्द की आवश्यकता नहीं है।

इसीप्रकार सिद्ध व्यक्ति रूप से अनन्त हैं गुणों के रूप में वे सब एक ही हैं क्योंकि आठ गुण जो एक सिद्ध में हैं वे ही आठों गुण उसीप्रकार से अनन्तानन्त सिद्धों में हैं अत: सिद्धों को नमस्कार हो यह कहने से अनन्तानन्त सिद्धों को नमस्कार हो जाता है अत: यहाँ भी सिद्धों के साथ ''सव्व'' विशेषण की आवश्यकता नहीं है।

तीसरे आचार्य परमेष्ठी हैं- आचार्य परमेष्ठी के ३६ मूलगुण होते हैं। शिष्यों को दीक्षा, निग्रह-अनुग्रह इनका मुख्यतया काम है। इनके ३६ मूलगुणों के पालन में किसी प्रकार का कोई अपवाद नहीं है वे यथावत् पालने ही होते हैं। अत: आचार्यों के अन्तर्गत कोई भेद नहीं है। समयानुसार वे आचार्य पद छोड़ भी सकते हैं। लेकिन उन्हें अपने मूलगुण पालन में कोई छूट नहीं दी जा सकती। इसलिए आचार्यों को नमस्कार करने में ''सव्व'' पद की कोई आवश्यकता नहीं है। आचार्यों को नमस्कार हो, यह कहने में सभी आचार्यों का ग्रहण अपने आप ही हो जाता है।

चौथे परमेष्ठी उपाध्याय हैं- उपाध्याय शब्द का अर्थ है 'उपेत्य अधीयन्ते यस्तात् स:' अर्थात् जिनके निकट बैठ पढ़ा जाय वे उपाध्याय हैं। इस व्युत्पत्ति के अनुसार उपाध्याय परमेष्ठियों में कोई अन्तर नहीं है सब एक ही हैं। उपाध्याय के २५ मूलगुण भी माने हैं। वे २५ मूलगुण ११ अङ्ग और १४ पूर्व हैं। इन दोनों का जोड़ २५ होता है। यह २५ प्रकार का श्रुत द्वादशाङ्ग (१२ अंक) में गर्भित है। यह द्वादशाङ्ग श्रुत दो प्रकार का है एक द्रव्यश्रुत दूसरा भावश्रुत।

सम्पूर्ण द्रव्यश्रुत का या उस द्रव्यश्रुत के भाव का जिसको ज्ञान है वह उपाध्याय परमेष्ठी है। उमास्वामी आचार्य की प्रशंसा में उन्हें ''श्रुत केवलिदेशीय'' कहा गया है इसका अभिप्राय यही है कि उन्हें पूर्ण द्रव्यश्रुत का ज्ञान नहीं था फिर भी उन्हें भावश्रुत का अत्यधिक ज्ञान था। इसलिए श्रुतकेवली कल्प थे। इसप्रकार द्वादशाङ्ग का सारभूत विशिष्ट ज्ञान जिनको होता है वे अन्य मुनियों को शिक्षा देने वाले उपाध्याय परमेष्ठी हैं। उपाध्याय परमेष्ठी में भी कोई अवान्तर भेद नहीं है। इसलिए ''णमो उवज्झायाणं'' में ये 'सव्व' विशेषण की आवश्यकता नहीं है।

अब पांचवाँ नम्बर आता है साधु परमेष्ठी का। साधु के २८ मूलगुण होते हैं। इसके साथ ही इन्हें उत्तरगुण भी पालन करने होते हैं। लेकिन इनके पालन करने में सभी साधु एक जैसे नहीं होते। किसी के मूलगुण पलते हैं तो उत्तरगुण नहीं पलते और मूलगुण में भी दोष लगता है अत: इन साधुओं में परस्पर भिन्नता है। यहाँ पूछा जा सकता है कि जब उनके मूलगुण नहीं पलते तब उन्हें साधु ही नहीं कहना चाहिए। लेकिन शास्त्रकारों ने उन्हें साधु माना है। अत: इन भावलिङ्गी साधुओं के शास्त्रकारों ने पाँच भेद किये हैं जिनके पाँच नाम इस प्रकार हैं- १. पुलाक, २. वकुश, ३. कुशील, ४. निर्ग्रन्थ, ५. स्नातक।

१. इनमें पुलाक मुनि वे हैं जो उत्तरगुणों की भावना नहीं रखते और व्रतों में भी कभी-कभी दोष लगाते हैं वे पुलाक हैं।

२. वकुश व्रतों का अखण्ड पालन करने पर भी शरीर, उपकरण आदि की विभूषण में अनुरक्त हैं।

३. कुशील दो प्रकार के हैं। प्रतिसेवना कुशील और कषाय कुशील। प्रतिसेवना कुशील-जो मूलगुणों, उत्तरगुणों का पालन करते हैं किन्तु शरीर, उपकरण आदि की मूर्च्छा से रहित नहीं हैं वे प्रतिसेवना कुशील हैं। कषाय कुशील- जिन्होंने अन्य कषायों को वश में कर लिया है किन्तु संज्वलन कषाय के अधीन हैं वे कषाय कुशील हैं।

४. निर्ग्रन्थ- क्षीण मोही १२ वें गुणस्थानवर्ती निर्ग्रन्थ हैं यहाँ ग्रन्थ का अर्थ अन्तरङ्ग परिग्रह कषाय से है।

५. स्नातक- परिपूर्ण ज्ञानी (केवलज्ञानी) स्नातक हैं। इसतरह साधु परमेष्ठी के ये पाँच भेद जिनके पृथक्-पृथक् नाम, जो गुण आदि की मात्रा से एक दूसरे से पृथक् हैं उन सबका ग्रहण करने के लिए साधु परमेष्ठी के साथ 'सव्व' विशेषण दिया है। अर्थात् ''णमो लोए सव्वसाहूणं'' इस पद में ''सर्व साधुओं को नमस्कार हो'' इसका अर्थ यह है कि लोक में उक्त पांच प्रकार के साधुओं को नमस्कार हो, अन्य परमेष्ठियों में इसप्रकार गुण भेद को लेकर कोई भेद नहीं है अत: उनके साथ ''सव्व'' विशेषण नहीं दिया है।

**डॉ० लालबहादुर शास्त्री अभिनन्दन ग्रन्थ से साभार**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# मङ्गलं कुन्दकुन्दाद्यो

पं. शिवचरणलाल जैन

विदित ही है कि दि. जैनधर्म, परम्परा कुन्दकुदाम्नाय या कुन्दकुन्दान्वय का पर्यायवाची है। यह जैन प्रतिमाओं, शिलालेखों, ग्रन्थों और यन्त्रादि की प्रशस्तियों और उल्लेखों से सूर्यप्रकाश सम स्पष्ट होता है। लगभग २ हजार वर्षों से दिगम्बर जैन साधुपरम्परा अपने को कुन्दकुन्दान्वय अर्थात् कुन्दकुन्द स्वामी के वंश का घोषित कर गौरव का अनुभव करती रही है। उसकी स्पष्ट मान्यता रही है कि कुन्दकुन्द का उनपर असीम उपकार एवं ऋण है जिसे न भुलाया जा सकता है न चुकाया जा सकता है। यद्यपि उसकाल में अन्य भी श्री धरसेन, पुष्पदन्त, भूतबली, गुणधर आदि आचार्य भी आगम के लिपिकार, आत्मगवेषी, ज्ञानी, ध्यानी, आंशिक श्रुतधराचार्य हुए हैं परन्तु उनका क्षेत्र आत्मसाधना रूप उद्देश्य तथा आगमश्रुत प्रकाशन भावना पर केन्द्रित रहा है। उनके प्रति भी श्रमणपरम्परा सदैव नतमस्तक रही है, उनका अवदान भी सदैव सविनय स्मरणीय है।

दिगम्बर जैनधर्म एवं परम्परा में आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी का आद्य के स्थापितरूप में मान्यता पर निम्न बिन्दुओं द्वारा दृष्टिपात करना अभीष्ट होगा।

१. अन्तिम श्रुतकेवली आ. भद्रबाहु के पश्चात् जो दि. संघ या मूलसंघ था, वह दुष्काल आदि के कारण शिथिल व विघटित हो रहा था। उसमें श्वेताम्बर आदि का प्राबल्य हो रहा था। उस संक्रमण के विभीषिका युग में आचार्य कुन्दकुन्द ने अपनी स्वयं की निर्दोष चर्या के साथ मूलसंघ को आगमोक्त निर्ग्रन्थ एवं शिथिलाचार से रहित कर सही दिशा में संगठित किया। उनके संघ में अन्तर्बाह्य दोनों रूप से नग्न द्रव्यलिङ्ग भावलिङ्ग दोनों रूप के धारी, लगभग पाँचहजार मुनि सम्मिलित होकर धर्मप्रभावना के मानदण्ड बने। यह कार्य अन्य से संभव नहीं था। किसी भी उद्देश्य से उनके स्थान पर अन्य को स्थापित करने का प्रयास दि. जैन के लिए घातक होगा।

२. आचार्य कुन्दकुन्द ने खण्डनात्मक, दण्डनात्मक व सृजनात्मक सभी उपायों से क्रियान्वयन किया। श्वेताम्बर और जैनेतर सांख्य, बौद्ध, वैशेषिक, जैमिनि आदि दर्शनों की एकान्तिक मान्यताओं का खंडन, शास्त्रार्थ आदि में विजय के द्वारा कर धर्मपताका फहराई। उन्होंने विकृत वेषधारी शिथिलाचारी साधुओं को अपने आत्म-वैभव, ज्ञान और चारित्र के तेज द्वारा व प्रायश्चित्तरूप दण्ड के द्वारा सत्यार्थ मोक्षमार्ग में लगाया। विशाल ८४ पाहुड व परिकर्म टीकारूप साहित्यसृजन के द्वारा आगे की साधुपरम्परा को भी सुरक्षित बनाया। यदि वे न होते तो अद्यावधि निर्ग्रन्थ मुनिपरम्परा ही शुद्धरूप में न होती।

३. मूलसंघ की चर्या हेतु भी उन्होंने तत्कालीन साधुसंघ को अनवरत अनुशासित कर शुद्ध आम्नाय में ढाला। लंबे समय तक उन्होंने साधुवर्ग को उचित आचरण का अभ्यासी बनाया। मूलाचार की रचना इसका प्रबल प्रमाण है।

४. अध्यात्म उनका प्रिय एवं मूल विषय था। इस हेतु उन्होंने अनेकान्त स्याद्वाद अर्थात् सापेक्षरूप से निश्चय-व्यवहार नयों की समष्टि-प्रतिपादन का महान् कार्य किया, जिसे उन्होंने समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, आदि में आत्म-स्वरूप व मोक्षमार्ग के निरूपण में निर्देशित किया है। दृष्टव्य है, उनकी आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु घोषणा-

**'दोण्हवि णयाण भणियं जाणइ णवरिं तु समयपडिबद्धो।**
**ण दु णयपक्खं गिण्हदि किंचिवि णयपक्खपरिहीणो॥**
**ण वि सिज्झइ वत्थधरो जिणसासणे जइवि होइ तित्थयरो।**
**णग्गो विमोक्खमग्गो सेसा उम्मग्गया सव्वे॥'**

उक्त दृष्टियों से प्रकट होता है कि सिरि भूवलय आदि बहुशः ग्रन्थों में प्रायः प्राप्त निम्नश्लोक जो कि मंगलाचरण के रूप में परम्परा में स्थापित ही है, निर्विवाद व अपरिवर्तनीय रूप में स्वीकार्य होना अपेक्षित है ताकि मूलसंघ नग्न दिगम्बर जैन निर्ग्रन्थ परम्परा संगठित एवं प्रभावकरूप में अक्षुण्ण बनी रहे।

**मंगलं भगवान् वीरो मंगलं गौतमो गणी।**
**मंगलं कुन्दकुन्दाद्यो जैनधर्मोऽस्तु मंगलम्॥**

इत्यलम्

श्यामभवन, बजाजा मैनपुरी (उ.प्र.)



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# पर्युषण के दिव्य आकाश पर प्रदूषण के बादल

विधानाचार्य ब्र. त्रिलोक जैन

**जागो-जागो धर्म सपूतों समय दे रहा है आवाज।**
**पर्युषण और श्री मंदिर की टूटे न कोई मर्यादा॥**

पर्युषण के दिव्य आकाश पर आज सांस्कृतिक कार्यक्रमों एवं आरती के नाम पर फूहड़ता, उदण्डता, अभद्रता, अनैतिकता स्वरूप प्रदूषण के काले बादल छा रहे हैं। पर्युषण का मौलिक स्वरूप खोता जा रहा है। राग-द्वेष से मुक्ति का पर्व, राग-द्वेष का रंग-मंच बनता जा रहा है। अहंकार ममकार के विसर्जन का पर्व, अहंकार ममकार की ललकारों का अखाड़ा बनता जा रहा है। त्याग तपस्या का पर्व भोग लिप्सा का साधन बनता जा रहा है धर्मध्यान की वृद्धि का पर्व आर्त्त, रौद्रध्यान का केन्द्र बनता जा रहा है प्रभुभक्ति का पर्व कम्वक्ती का साधन बनता जा रहा है। संवर निर्जरा स्वरूप शुभोपयोग का पर्व अशुभ-उपयोग का साधन बनता जा रहा है। कषायों पर विजय का पर्व कषायों के विस्तार का साधन बनता जा रहा है।

जिस पर्व की धरती क्षमा और ब्रह्मचर्य आकाश है। संसार सागर से पार होने विनयरूपी नौका एवं सरलता की पतवार है। शौचधर्म के उत्तङ्ग शिखरों के पीछे से सत्य के सूर्योदय में संयम का प्रभात, तप का तेज, त्याग का प्रकाश, आकिञ्चन्य का आलोक और शील की सुगंध है। ऐसा महान् पर्व विकृति के भंवर में फँस गया है।

मैं आज से कोई बारह वर्ष पूर्व पर्वराज पर्युषण पर्व पर प्रवचनार्थ कटनी गया था। पूर्व संध्या में एक सज्जन मेरे पास आए और एक लिस्ट मुझे सौंपी जिसमें दस दिन तक का प्रवचन समयसीमा में नियंत्रित किया गया था और विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का उल्लेख था। किसी-किसी दिन प्रवचन को मात्र पैंतीस मिनिट का समय निर्धारित था। उससमय मुझे मुक्ति की आधार माँ जिनवाणी पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों का बंधन अच्छा नहीं लगा और उन सज्जन से कहा कि आप मेरे प्रवचन में घड़ी उतार कर ही आना। उन्हें अच्छा नहीं लगा, कार्यक्रमों के आयोजक जो थे। कड़वा सा घूंट पी कर बोले भैया जी आप मेरी बात समझये कार्यक्रम नहीं होंगे तो पब्लिक ही नहीं आएगी आप प्रवचन किसे सुनाएँगे। वे सीधे-सीधे माँ जिनवाणी को चुनौती दे रहे थे। यद्यपि यह मेरा धर्म क्षेत्र में बाल्य काल था, कटनी बड़ी जैन समाज थी, मैने चुनौती स्वीकार की। श्रीमान् जी आप क्या समझ रहे हैं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में माँ जिनवाणी से ज्यादा ताकत है। अब सिर्फ माँ जिनवाणी ही होगी और मैं रात्री आठ बजे कटनी के विशाल वोर्डिग में प्रवेश करते ही ताला लगवाता। जो आठ बजे अन्दर वो अन्दर और जो बाहर वो बाहर। परिणाम यह हुआ ७.३० से वोर्डिग पैक होने लगी, पर्युषण आनंद के हिमालय पर पूर्ण हुआ। अगले वर्ष सतना पर्युषण में उसी स्थान पर रुका था, जहाँ प्रवचन उपरान्त कार्यक्रम होते थे। एक रात जो जैसी फूहडता देखी सुनी मन खिन्न हो गया। उसी रात मंदिर से मूर्ति चोरी हो गई। प्रातः काल जब मूर्ति चोरी का समाचार सुना तब हृदय पीड़ा से तो भरा ही, पर एक दृढ़ संकल्प मन के आकाश पर उभरा कि आज के बाद पर्युषण में जहाँ कार्यक्रम होंगे वहाँ प्रवचन को नहीं जाऊँगा।

एक स्थान पर प्रवचनार्थ जैसे ही मैं पहुँचा भाई बहनों ने मुझे घेर लिया। आहार के लिये लेने आते, आहार उपरान्त छोड़ने आते। साझ सब बच्चे आये भैया जी कौन-कौन से कार्यक्रम करवायेंगे। मैंने कहा कोई नहीं मात्र प्रवचन होंगे। परिणाम सब तोता मैना उड़ गये। मैंने जब कार्यक्रमों से होने वाली विकृतियों पर प्रकाश डाला तो अगले दिन एक सज्जन ने बताया कि पिछले वर्ष कार्यक्रमों के दौरान परिक्रमा पथ में अनाचार करते युगल को पकड़ा गया था। एक अन्य स्थान पर वाक्या और खेद जनक हुआ इन्डियन आइडियल की तर्ज पर एक कार्यक्रम के दौरान एक ग्रुप ने अपनी ओर से एक मुसलमान युवक को गाने उतार दिया और एक अबोध बालिका का उपहार दे दिया।

अभी-अभी मैं एक बड़े शहर में प्रवचन कर रहा था। प्रवचन के अंतिम दिन एक सज्जन ने खड़े होकर पर्व में होने वाले कार्यक्रमों पर रोक लगाने की मांग करते हुए कहा, भैया जी यह काम आपके सामने हो गया तो ठीक नहीं तो इस साल भी विकृति की भंवरे उठना हैं। मैंने कार्यक्रम की आयोजक महिला मण्डल से बात की, उनके कार्यक्रम समर्थक तर्को को सुनने के बाद मैंने उन माता बहिनों से एक बात कही- 'अपनी अंतरआत्मा से पूछो आप जो कर रहीं हो उसका धर्म से कहीं दूर तक का भी वास्ता है?' उनके चेहरे नीचे थे। कोई उत्तर नहीं



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

सूझा तो एक राज और बतला दिया, भैया जी माना कि हमारे कार्यक्रमों में हूटिंग हुड़दंग होता है, तभी एक सदस्या ने धीरे से कहा सीटी भी बजती है। मण्डल प्रमुख ने कहा फलां वेदी पर सायं ७ बजे से १०.३० तक जो आरती होती है, उसमें क्या नहीं होता। यहाँ तक की अन्य जाति के लड़के भी आते हैं। और क्या-क्या होता है, हम कह नहीं सकते आप सुन नहीं सकते। मैंने कहा यही तो मैं कह रहा हूँ पर्व के दौरान होने वाले कार्यक्रमों में एक प्रकार से सातों व्यसन परिपुष्ट हो रहे हैं। हार-जीत, राग-द्वेष, हर्ष-विवाद, शारीरिक, मानसिक विकार आदि प्रदूषण के बादल पर्युषण के दिव्य सूर्य को ढक रहे हैं। आरती में जब फूहड़ता पर आइटम गानों की तर्जो पर लोग नाचेगें तो भक्ति नहीं कामव्यक्ति ही बढ़ेगी और इसका खतरनाक उदाहरण एक शहर में सुनने को आया। आरती में कॉम्पटीशन बढ़ा, वेष-भूषा विकृत हुई अनजान युवकों का प्रवेश हुआ एक धनाढ्य परिवार की बालिका की एक अनजान युवक से आखें चार हुई प्रेम प्रपंच में नासमझ फंस गई। धीरे-धीरे व्यावहारिक मर्यादायें टूटीं शील भंग हुआ और उसकी व्ही.सी.डी. तैयार हुई और इसके बदले में माँ-बाप से लाखों रुपए वसूल कर केस रफा-दफा हुआ। पर सुगंध और दुर्गंध छिपती नहीं है। लोगों को चर्चा का विषय मिले और चर्चा न करें यह कैसे संभव है लेकिंन वे भूल रहे हैं जो घटना आज दूसरों के घर में घटी है वह अपने घर में भी घट सकती है। कारण मन को विकृत करने का साधन टेलीविजन सातों व्यसनों का केन्द्र घर में तो मौजूद है ही, हमने सांस्कृतिक कार्यक्रमों के नाम पर पर्व आदि के अवसर पर मंदिरों में टी. वी. कार्यक्रमों की नकल पर प्रोगाम प्रस्तुत करना शुरु कर दिया। इससे सबसे बड़ी हानि यह हुई कि धार्मिक ज्ञान एवं मंदिर की मान मर्यादाओं से अनभिज्ञ असम्यक् चेतना के लोगों का मंदिरों में प्रवेश हुआ और कार्यक्रमों की ओट में असम्यक् गतिविधियों का सूत्रपात हुआ। फिर क्यों न इन कार्यक्रमों को पूर्णत: बंद कर दिया जाय। एक समय था कि घर में भी माँ जिनवाणी का स्वाध्याय होता था। आज तो कुछ एक विधानाचार्यों ने विधान आदि में शास्त्रसभा को ही बंद कर दिया, यह अक्षम्य अपराध है। एक तरफ हम रात्रि विवाह का निषेध कर रहे हैं, दूसरी ओर विधान आदि में आरती की बोली लगाकर हाथी बैण्ड बाजे जनरेटर लाईट और कॉम्पटीशन का भाव हो तो पूरी बारात की तरह आरती यात्रा निकलती है। हजारों लाखों बिजली के कीड़ों को रौंधते हुए क्या धर्म की जय हो सकती है। पर क्या करें बिजली के कीड़ों को तो कोई जीव मानता ही नहीं। रात्रि स्टेज प्रोगामों में भी हेलोजन आदि के प्रयोग से मंच पर कीड़ों की बरसात होती है और उन्हीं जीवों को पैरों तले रौंदकर घोर हिंसा होती है। इससमय कहाँ पलता है 'जियो और जीने दो' का धर्म।

कुछ लोग भीड़ के साथ खड़े होकर सोच रहे हैं, भीड़ हमारे साथ है। एक समय था जब समाज के स्तर को, व्यक्ति के स्तर को ऊँचा उठाने कार्यक्रम होते थे पर आज तो भीड़ के स्तर पर कार्यक्रम होते हैं। मैंने सुना है तीर्थंकर भगवंतों के चरण कमल में शेर और गाय एक साथ पानी पीते थे। जन्मजात प्रतिस्पर्धी आपसी बैर को भूल जाते थे। यही धर्म का अभ्युदय था। पर आज जो कार्यक्रमों के नाम पर प्रतिस्पर्धा के संघर्ष को बढ़ाया जा रहा है। बेबी प्रतियोगिता के नाम पर सीधे-सीधे सौन्दर्य प्रतियोगिता हो रही है, फूहड़ हास्य व्यंग्य हो रहे हैं। फिल्मी गानों की धुनों पर नृत्य हो रहा है, कुल मिलाकर वह सब कुछ हो रहा जो धर्म की आत्मा को आवृत करता है देव-शास्त्र-गुरु की अविनय करता है। अब समय आ गया है कि धर्मपीठ से इन बुराईयों के खिलाफ जागृति का शंख नाद किया जाए। पर्व धर्मध्यान की वृद्धि को आते हैं, अत: पर्व के आयोजन में प्रयोजन को न भूल जायें। और वैसे भी धर्म मनोरंजन का नहीं आत्मरंजन का साधन है। मैं आशा करता हूँ परम पूज्य आचार्य भगवतों से साधु संतों से, पूज्य आर्यिका माताओं, एवं श्रद्धेय ब्रह्मचारी भाई एवं ब्रह्मचारी बहिनों के साथ-साथ सम्मानीय जिनवाणी उपासक विद्वान्गण सभी इस ओर ध्यान देकर धर्मोपदेश पीठ से इन बुराईयों के प्रति जागृति का शंख नाद करेंगे। समस्त पत्र-पत्रिकाओं के सम्मानीय सम्पादकों से नम्र निवेदन है कि वे भी पर्व के पूर्व में ही उपरोक्त विषय पर अपनी लेखनी से विकृतियों के उन्मूलन की दिशाओं में सार्थक प्रयास करेंगे।

लिखते-लिखते एक धर्म नगरी की महावीर जयंती का वर्णन और कर दूँ। दो बजे से महावीर जयंती का जुलूस निकला, उपस्थिति धीरे-धीरे बड़ी, कार्यक्रम स्थल पर कोई व्यवस्था नहीं। बिना माईक के अभिषेक पूजन हुआ। मैंने आश्चर्यचकित होकर एक सज्जन से पूछा यहाँ की महावीर जयंती तो प्रशंसनीय है इतनी सादगी तो मैंने कही नहीं



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देखी वो बोले भ्रम में न रहे भैया जी रात में देखें यहाँ की महावीर जयंती। शाम सात बजे तक लाईट व साउन्ड लग गया, थोड़ी देर में प्रोग्राम शुरु हुआ। कोई नेताजी का भाषण व सम्मान हुआ। इसके बाद शुरु हुआ जबलपुर से आई ऑर्केस्ट्रा का प्रोग्राम। एक दो भजन उपरान्त सीधे-सीधे फिल्मी गीत हुए इतना ही नहीं फूहड़ नृत्य भी हुए। सबसे बड़ा आश्चर्य, मुझे जिस कार्य के लिए जबलपुर से बुलाया गया था, अहिंसा सभा हुई नहीं और न मुझे कोई बुलाने आया। मैं प्रात:काल उठकर चुपचाप जबलपुर आ गया। कुल मिलाकर धर्म के नाम पर धर्म की होली जल रही है। मेरा तो इतना ही कहना है या तो मंच से पर्वराज पर्युषण अथवा महावीर जयंती के बैनर निकाल दो या फिर इन पवित्र पर्वों की मर्यादा का पालन करो। अन्त में यही कहूँगा कि हम पर्व के प्रयोजन को समझें, पर्व आया है श्रमणत्व की साधना के लिए, श्रावकाचार के पालन के लिए, हृदय की विशुद्धि के लिए, परिणामों की निर्मलता के लिए, बुराईयों एवं कुरीतियों के वमन के लिए। एक समय था जब श्रावक श्राविकायें भी मुनि महाराज एवं आर्यिका माताओं की तरह एकासन, उपवास, सामायिक, अन्तराय आदि की साधना कर साधु बनने की भावना भाते थे। आज भी जो भव्य जीव इसप्रकार की साधना करते हैं मैं उन्हें प्रणाम करता हूँ और जो भटक गये हैं अपने लक्ष्य से, जो कार्यक्रमों में उमड़ती भीड़ को ही पर्व की सफलता मान रहे हैं, वे विचार करें क्लब के डांस और तुम्हारी आरती में क्या अंतर है। यदि भक्ति ही करना है तो मीरा की तरह करो जिसकी भक्ति देखने अकबर बादशाह भी हिन्दु साधु का वेष बनाकर मीरा को सुनने मजबूर हो गया था। पर आज की युवा पीड़ी को क्या करें वो खुद ही फिल्मों की नकल करने लग जाती है। ध्यान रहे गुलाब का फूल देखने में कितना भी सुन्दर क्यों न हो पर गेहूँ के खेत में तो वो खरपतवार ही है। ठीक इसीप्रकार से भक्ति के क्षेत्र में फिल्मी गानों की नकल कम्वक्ती की खरपतवार ही है। खरपतवार के उन्मूलन के बिना धर्मध्यान की फसल नहीं लहरा सकती है अत: विचार करें भीड़ आपके साथ है या आप भीड़ की मानसिकता के अनुसार कार्यक्रम कर रहे हैं। मेरे भाइयों पर्व मनमानी करने नहीं मन को जीतने आया है। जरा सोचिये कहीं आप उस बच्चे की तरह अपने मंदिर को विकृत तो नहीं कर रहे जिसने नहाने के साबुन को बाथरूम की मोरी में डाल दिया है। किसी को गलत ठहराना मेरा मकसद नहीं है, यदि मैं कहीं गलत हूँ तो मुझे सावधान करेंगे, मैंने तो अपनों से अपनी बात कही है मुझे आशा है आने वाले पर्युषण प्रदूषण से मुक्त होगे।

**धर्मध्यान की राह दिखाने पर्युषण पर्व निराले हैं।**
**दूषण और प्रदूषण से यह मुक्ति दिलानेवाले हैं॥**
**जियो और जीने दो सबको यही सँदेशा लाये हैं।**
**क्षमा करें मुझे शुभ भावों से, आप बड़े दिलवाले हैं॥**

**श्री वर्णी दिगम्बर जैन गुरुकुल**
**पिसनहारि मढ़िया, जबलपुर-३**

## परम समीप

अहारजी सिद्धक्षेत्र पर चातुर्मास के उपरान्त आचार्य महाराज संघ-सहित सिद्धक्षेत्र नैनागिरि आ गए। शीतकाल यहीं बीत गया। एक दिन अचानक दोपहर में आचार्य महाराज ने बुलाया। मुनिश्री योगसागर जी भी आए। मैं भी पहुँचा। आचार्य महाराज बोले कि 'ऐसा सोचा है कि तुम दो-तीन साधु मिलकर सागर की ओर विहार करो। वहाँ स्वास्थ्य लाभ भी हो जाएगा और धर्म-प्रभावना भी होगी। तुम सभी को अब बाहर रहकर धीरे-धीरे सब बातें सीखना हैं।'

संघ में पहली बार हम लोगों पर यह जिम्मेदारी आई थी, सो हम घबराए कि ऐसा तो कभी सोचा भी नहीं था। हम तो अपना जीवन आचार्य महाराज के चरणों में समर्पित करके निश्चिन्त होकर आत्म-कल्याण में लगे थे। कुछ समझ में नहीं आया। गुरु की आज्ञा अनुल्लंघनीय हुआ करती है, पर मन को कैसे समझाएँ? मन भर आया। हमने कहा कि 'महाराज जी! आपसे दूर रहकर हम क्या करेंगे, कैसे रह पाएँगे?'

आचार्य महाराज गम्भीर हो गए। बोले- 'मन से दूर चले जाओगे क्या?' हमने फौरन कहा कि 'यह तो कभी संभव ही नहीं। स्वप्न में भी नहीं।' तब वे हँसने लगे। बोले कि 'जाओ हमारा खूब आशीर्वाद है। घबराना नहीं। अध्यात्म में मन लगाना। मेरी आज्ञा में रहने वाला मुझसे दूर रहकर भी मेरे अत्यन्त समीप ही है और मेरी आज्ञा नहीं मानने वाला मेरे निकट रहकर भी मुझसे बहुत दूर है।'

आज भी हम उनसे दूर रहकर भी उन्हें अपने अत्यन्त समीप पाते हैं। कभी दूरी का अहसास नहीं होता। सचमुच, आत्मा के निकट रहना ही सच्चा सामीप्य है।

**मुनि श्री क्षमासागर-कृत 'आत्मान्वेषी' से साभार**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# दूरगामी परिणामों पर सोचें ( दिल से )

अनंत महादेवन
सुप्रसिद्ध फिल्मनिर्देशक

**इंसान को हिंसा का अधिकार तो किसी भी रूप में प्राप्त नहीं है, चाहे वह इंसान की बात हो या किसी अन्य जीव की। लेकिन सृष्टि का अकेला बौद्धिक प्राणी होने का वह कई रूप में मनचाहा फायदा उठाता है। बेशक बाद में उसे भी उसके दुष्परिणाम भोगना पड़ें।**

बचपन से जो बात मेरे दिल को दुखाती रही है, वह है- इंसानों द्वारा जीवों को आहार बनाना। चिकन से भरे ट्रक देखता हूँ, तो मेरा दिल रो देता है। जिंदा मुर्गे ट्रक के दड़बों में यूं ठुंसे रहते हैं कि उन्हें ठीक से खड़े होने की भी जगह नहीं मिलती। चिकन शॉप पर मुर्गों की टांगे बांधकर उन्हें तोलने के लिए स्प्रिंग वाले तराजू से उल्टा लटकाया जाता है। उन्हें चिकन शॉप के दड़बे में बंद रखा जाता है, जहाँ ग्राहक के रूप में यमराज के आने तक पीड़ादायक परिस्थितियों में जिंदा रखा जाता है। फिर गर्दन पर छुरी चलती है और 'ची' की आवाज के साथ उसका जीवन खत्म! इसी तरह मछलियाँ मानव की अमानवीयता के चलते जल-जीवन से किचन की कड़ाही तक का सफर तय करतीं हैं। उन्हें खानेवाला नहीं सोचता कि पानी से निकाले जाने पर उनकी छटपटाहट में कितना असहनीय दर्द छिपा होगा। कटते हुए बकरे की आंखों में झांककर देखिए, वह किस तरह निरीहता से मिमियाता, छटपटाता और शांत हो जाता है! काश! जो लोग सुनामी में डूब गए, वे वापस आकर मछलियों को पानी से निकालने का दर्द बता पाते! काश! जो लोग बकरे की तरह कत्ल किए गए, वे लौटकर कत्ल होने का दर्द इंसानों को बताते। सोचते-सोचते मेरा दिमाग फटने लगता है कि इंसान होकर हम इतने हैवान क्यों हैं? कोई जीव-जन्तु हमें नुकसान पहुँचायें और उसे मारा जाए, तो किसी हद तक ठीक है। लेकिंन वे तमाम प्राणी हमें क्या नुकसान पहुँचाते हैं, जिनको हम भोजन के लिए मार देते हैं? इंसानों को यह अधिकार किसने दिया कि वह दूसरे जीवों का जीवन छीन लें? प्रकृति के नियमों में जैविक संतुलन भी है। क्या हम जीवों को मारकर इस संतुलन को नहीं बिगाड़ रहे? क्या प्रकृति ने हमें इस संतुलन को बिगाड़ने के लिए ही इतना विकसित किया है? प्रकृति से छेड़छाड़ के नतीजे में कृत्रिम गैसें भूमण्डल की ओजोन परतों को नष्ट कर रहीं हैं। जिससे पृथ्वी गर्म हो रही है और ध्रुवीय बर्फ गलकर सागरों के जल-स्तर को बढ़ा रही है। धरती का प्राकृतिक संतुलन बनाए रखने में चींटी से हाथी तक के जीवन का चक्र तय है। इससे छेड़छाड़ करना घातक नहीं होगा?

मांसाहार करने वालों का कहना है कि मांसाहार छोड़ने पर भोजन की समस्या विकराल रूप ले लेगी। मेरे ख्याल से दुनिया की दस गुना आबादी को भी शाकाहार पाल सकता है, बशर्ते शाकाहार के स्रोतों का सही तरह से दोहन किया जाए। अपने देश में ही जगह-जगह बड़े पैमाने पर जमीन खाली पड़ी हुई है। क्या ऐसी बंजर भूमि को उपजाऊ नहीं बनाया जा सकता? यहाँ खाने योग्य वनस्पतियाँ उगाई जाएँ। जंगल के जंगल ऐसे हैं, जिनका व्यावसायिक उपयोग भले हो, भोजन संबंधी जरूरत में प्रत्यक्ष उपयोग कोई नहीं है। उनको खाने योग्य फलों के जंगलों में बदला जा सकता है। यहाँ तक कि गमलों में सजावटी पौधों की जगह टमाटर, बैंगन उगा सकते हैं। 'मशीन' पर जितनी ऊर्जा खर्च कर रहे हैं, अगर 'जमीन' पर उससे आधी भी खर्च करें, तो यह धरती शायद दस गुना इंसानी आबादी को शाकाहार से पाल सकती है। मांसाहार उद्योग में लगे अरबों-खरबों लोगों के बेरोजगार होने का डर, इसी बात से समाप्त हो जाना चाहिए कि तब कृषि मांसाहार उद्योग से कहीं ज्यादा उन्नत उद्योग होगी और ज्यादा लोगों को रोजगार प्रदान करेगी। बेहतर शक्ति, स्वास्थ्य और स्वाद के लिए भी मांसाहार गलत है। हाथी जैसा शक्तिशाली, बड़ा और 120 साल जीने वाला जीव शाकाहारी है, जबकि शेर 20 साल में ही मर जाता है। मेडिकल साइंस सिद्ध कर चुकी है कि वानस्पतिक प्रोटीन व विटामिन, जैविक प्रोटीन व विटामिनों से ज्यादा स्वास्थ्य-वर्धक हैं। दरअसल, हमारा पाचन-तंत्र मांस को पचाने के



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिए बना ही नहीं है। कुछ लोगों या प्रजातियों को छोड़ दें, तो सिर्फ मांस पर कोई जीवित नहीं रह सकता। विशुद्ध मांसाहारी लोग भी मांस के साथ सलाद-फल आदि के रूप में वनस्पति का सेवन करते ही हैं। वनस्पति से प्राप्त फाइबर के बगैर मांस उनकी आंतों में ही फँसकर रह जाएगा। सुस्वाद भी नहीं लगेगा।

पशु-पक्षियों के हितों की रक्षा के लिए 'पेटा' जैसी संस्थायें हैं। मेनका गांधी जीवों के लिए काम कर रही हैं। सितारे तरह-तरह के पोज बनाकर जीवों पर दया की सिफारिश करते हैं। लेकिंन क्या इनमें से सब लोग जीवों के हितैषी हैं? मुझे तो जानकरी है कि प्रचार के लिए ऐसी संस्थाओं से जुड़े हुए कई लोग मांसाहार के बिना तृप्ति ही नहीं पाते। ये संस्थाएँ बहुत से लोगों के लिए राजनीतिक रोटियाँ सेंकने या अन्य कोई निजी स्वार्थ साधने का साधन बनी हुई हैं। जबकि आज शाकाहार अपनाना बहुत जरूरी है।

**'दैनिक भास्कर' भोपाल,**
**29 जुलाई 2007 से साभार**

## कहाँ तक आपका शासन व अधिकार

उन दिनों मिथिला में राजा जनक का राज्य था। राजा जनक अपनी न्यायप्रियता और धर्म-प्रेम के लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध थे। वे वैराग्य और नि:स्पृहता के आर्दश माने जाते थे। अपनी देह तक को वे पर जानते थे। इसी कारण विद्वान् उन्हें 'विदेह' सम्बोधित कर बहुत सम्मान दिया करते थे। वास्तव में वे 'घर में ही वैराग्य' की जीवित मूर्ति थे।

उनके राज्य में चार विद्यापीठ व अनेक गुरुकुल थे। एक समय दो गुरुकुलों के ब्रह्मचारियों में आपस में वाद-विवाद हुआ, फिर हाथापाई और मारपीट होने लगी। अन्त में एक गुरुकुल के स्थान को क्षति करने की शिकायत राज-अधिकारियों तक पहुँची। फलत: उनके एक प्रमुख नेता बटु को आरक्षक ने कैदकर राजा जनक के सामने प्रस्तुत किया। जब उस निर्भीक नवयुवक बटु ने कथित आरोप स्वीकार किया तो राजा जनक ने उसे अपने राज्य से बाहर निकल जाने का कड़ा दण्ड सुना दिया।

बटु शास्त्रज्ञ भी था। वह विनम्रता से बोला- 'हे राजन्! मुझे पहिले बताइये कि आपका शासन व अधिकार कहाँ तक है जिससे कि मैं उस शासन की सीमा से परे चला जाऊँ।' दरबारियों की दृष्टि में यह प्रश्न साधारण था, किन्तु राजा जनक असाधारण विद्वान् थे, वे सोच-समझकर ही उत्तर दिया करते थे। उन्होंने सोचा तो पाया कि प्रकृति के जल, थल, नभ, सूर्य, चन्द्र आदि अनेक उनके शासन व अधिकारों से परे हैं। वे सब एकदम स्वतंत्र हैं। वे मेरे अधिकार में नहीं हैं। फिर पुरजन, परिजन व स्वजन की बात ही क्या? वे तो स्पष्टत: पर हैं। फिर और भी गहराई में उतरे तो पाया कि उनका स्वयं का तन, यौवन और जीवन क्षणभर भी उनके शासन व अधिकार के घेरे में नहीं है। यह तथ्य जानकर उनका मुख-मण्डल गम्भीर हो गया। फिर बटु से बोले- 'हे विद्वान् बटु! तुमने ऐसा प्रश्न पूछा है कि मैं निरुत्तर सा हो गया हूँ। सच पूछो तो मेरे शासन व अधिकार में न कोई भू-कण है और न तुच्छ तृण, और न स्वल्प क्षण ही है, इन्हें अपना व अपने शासन का मानना केवल अज्ञान और अहंकार है।'

बटु विनयपूर्वक बोला- 'हे धर्मज्ञ राजन्! आपके प्रत्येक शब्द परमार्थ में डूबे, खरे सत्य हैं किन्तु मैं तो आपकी दण्ड-व्यवस्था की प्रतीक्षा में हूँ।'

राजा जनक धीर और गम्भीर वाणी में बोले- तो सुनो बटु, तुम अपने गुरुकुल जाओ और पठन-पाठन में चित्त दो। बस, याद रखो कि- '**आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।**' तुम शान्ति से अध्ययन चाहते हो तो दूसरों के प्रति भी उसके प्रतिकूल आचरण न होने दो।

वह विनयपूर्वक बोला- 'हे महाराज! मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि आपकी आज्ञा का जीवनपर्यन्त अक्षरक्ष: पालन करूँगा।' और वह योग्य नमस्कार कर अपने गुरुकुल की ओर चला गया।

राजा के ज्ञान-चक्षु बटु के निमित्त से खुले और बटु की आचरण-दृष्टि राजा के निमित्त से खुली। सच है- '**परस्परोपग्रहो जीवानाम्।**' बटु एक दिन मिथिला का परम विद्वान् व राजपुरोहित हुआ।

**श्री नेमिचन्द्र पटोरिया-कृत**
**'बोध कथामंजरी' से साभार**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# श्रीज्ञानाष्टकम्

(वसन्ततिलका छन्द)

**मुनि श्री प्रणम्यसागर जी**
**(आचार्य श्री विद्यासागर जी संघस्थ)**

**श्रीमच्चतुर्भुजभुजारमणास्पदीया**
**सौभाग्यवद्-घृतवरी तनयश्च तस्याः।**
**योऽभूत् कवित् कविवरो यमधर्ममस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ १॥**

**अन्वयार्थ**- (श्रीमच्चतुर्भुजभुजारमणास्पदीया) श्रीमान् चतुर्भुज की भुजाओं में रमण के स्थान को प्राप्त...(च) तथा (सौभाग्यवद्घृतवरी) सौभाग्यवती घृतवरी स्त्री थी (तस्याः) उनका (तनयः) पुत्र (यःतु) जो कि (कवित्) आत्मा को जानने वाला (कविवरः) कवियों में श्रेष्ठ (यमधर्मम:) यमरूपी धर्म की लक्ष्मी वाला (अभूत्) था (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्रीज्ञानसागरयति के (पदयोः) चरणों में (नमोऽस्तु) मेरा नमस्कार हो।

**भावार्थ**- श्रेष्ठी चतुर्भुज और माता घृतवरी के श्रेष्ठ पुत्र पं. भूरामल हुए हैं वही आगे जाकर श्री ज्ञानसागर आचार्य कहलाये।

**वीरोदयप्रभृतयो भुवि यस्य शस्ता**
**ग्रन्थाश्च लक्षणभृता विदुषां प्रसक्ताः।**
**व्याहन्ति मंक्षु तिमिरारि रिवाघवस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ २॥**

**अन्वयार्थ**- (यस्य) जिनके (ग्रन्थाः) ग्रन्थ (वीरोदय प्रभृतयः) वीरोदय आदि (भुवि) पृथ्वी पर (शस्ताः) प्रशंसनीय हैं, (लक्षणभृताः) व्याकरण साहित्य आदि के लक्षणों से परिपूर्ण हैं, तथा (विदुषां प्रसक्ताः) विद्वानों को आसक्त करने वाले हैं (तु) और जो (मंक्षु) शीघ्र ही (तिमिरारिः इव) सूर्य के समान (अघवस्तु) पाप अन्धकाररूपी पदार्थों का (व्याहन्ति) नाश करने वाले हैं (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्री ज्ञानसागर मुनिराज के (पदयोः) चरणों में (नमोऽस्तु) नमस्कार हो।

**भिन्नार्त्तरौद्रहृदयो जननार्त्तदूरो**
**मिथ्याप्रपञ्चरहितः शुभभावपूरः।**
**शुद्धात्मवृत्तिरसिकः श्रियमात्मनोऽस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ३॥**

**अन्वयार्थ**- (भिन्नार्त्तरौद्रहृदयः) जिनका हृदय आर्त्त, रौद्रध्यान से रहित है, (जननार्त्तदूरः) जो जन्म के दुःखों से दूर हैं (मिथ्याप्रपञ्चरहितः) जो मिथ्या प्रपञ्चों से रहित हैं, (शुभभावपूरः) जो शुभभावों से वृद्धिंगत हैं (शुद्धात्मवृत्तिरसिकः) शुद्धात्मा में प्रवृत्ति करने में जिन्हें रस आता है (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्रीज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमोऽस्तु) मेरा नमन् हो ताकि (आत्मनः) मेरी आत्मा का (श्रियं) कल्याण (अस्तु) हो सके।

**पंचाक्षकृष्णफणिने प्रथुवैनतेयः**
**कामानलस्य जलदो जिनभानुभायः।**
**गङ्गापवित्रजलवद्विमलं मनस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ४॥**

**अन्वयार्थ**- (यः) जो (पंचाक्षकृष्णफणिने) पाँच इन्द्रियरूपी काले सर्प के लिये (प्रथुवैनतेयः) विशाल गरूड़ के समान हैं (कामानलस्य) जो काम-वासना रूपी अग्नि को बुझाने के लिये (जलदः) मेघ के समान हैं (जिनभानुभा) जिनकी आभा जिनेन्द्रभगवान् रूपी सूर्य के समान है (मनः तु) तथा जिनका मन (गङ्गापवित्रजलवत्) गङ्गा के पवित्र जल के समान (विमलं) निर्मल है, (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्री ज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमः अस्तु) मेरा नमन् हो।

**भूरामलेऽपि विमलः कलिरूढिपङ्काज्**
**ज्ञानार्णवे विमलचिन्मयभङ्गलीनः।**
**यस्मात् सदैव कुशलं जगतां समस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ५॥**

**अन्वयार्थ**- (भूरामले अपि) जो ब्रह्मचारी अवस्था में पं. भूरामल होने पर भी (कलिरूढिपङ्गात्) कलिकाल सम्बन्धी रूढ़ि के कीचड़ से (विमलः) रहित रहे, जो (ज्ञानार्णवे) श्री ज्ञानसागर होने पर (विमलचिन्मय भङ्गलीनः) निर्मल चिन्मय की तरङ्गो में लीन रहे (यस्मात्) जिनसे (सदैव) हमेशा (जगतां) इस जगत का (कुशलं) कल्याण (समस्तु) होता हो (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्री ज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमः अस्तु) मेरा नमस्कार हो।

**चित्ते दया विनिवसत्यभिभूतमेति**
**दुष्टापकीर्तिरघताऽपि विभीतिमेति।**
**आचार्यवर्य! समतासुखवस्तु नस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ६॥**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**अन्वयार्थ**- (चित्ते) जिनके चित्त में (दया) दया (विनिवसति) रहती है (दुष्टापकीर्तिः) दुष्ट अपयश जिनसे (अभिभूतं) पराजय को (एति) प्राप्ति होता है (अघता) पाप भाव (अपि) भी जिनसे (विभीतिं) भय को (एति) प्राप्त होता है (आचार्यवर्य) ऐसे हे आचार्यश्रेष्ठ (नः) हमको (तु) भी (समतासुखवस्तु) समता सुख की वस्तु मिले (तत्) अतः उन (ज्ञानसागरयतेः) श्रीज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमः अस्तु) मेरा नमस्कार हो।

**यत्नात् शशास वृषवीरशिवार्यसंघे**
**सिद्धान्तसंस्कृतकथादिसुशास्त्रसंघम्।**
**पूज्योऽपि योऽत्र मृदुतालयकेतुरस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ७॥**

**अन्वयार्थ**- (वृषवीरशिवार्यसंघे) श्री आचार्य धर्मसागर, वीरसागर एवं शिवसागर जी के संघ में (सिद्धान्त संस्कृतकथादिसुशास्त्रसंघम्) सिद्धान्त, संस्कृत, प्रथमानुयोग आदि श्रेष्ठ शास्त्रों को (यत्नात्) यत्नपूर्वक (शशास) जो पढ़ाते थे। (यः) जो (अत्र) इस लोक में (पूज्यः अपि) पूज्य होते हुए भी (मृदुतालयकेतुः) मृदुतारूपी महल की पताका (अस्तु) हैं (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्री ज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमः अस्तु) मेरा नमन् हो।

**त्वं चित्तगेहकमलं मुनिप! प्रविश्य**
**सद्ध्यानतोरणसमागत आप्रतिष्ठ।**
**भिक्षाचरोऽपि विददाति सुवस्तुनस्तु**
**तज्ज्ञानसागरयतेः पदयोर्नमोऽस्तु॥ ८॥**

**अन्वयार्थ**- (मुनिप!) हे मुनिश्रेष्ठ! (त्वं) आप (सद्ध्यानतोरणसमागतः) समीचीन ध्यानरूपी तोरण द्वार से आते हुए (चित्तगेहकमलं) मेरे चित्तरूपी गृह कमल में (प्रविश्य) प्रवेश करके (आ प्रतिष्ठ) विराजमान होओ। (भिक्षाचरः अपि) जो भिक्षाचर्या करते हुए भी (नः) हमको (सुवस्तु) श्रेष्ठवस्तु (तु) अवश्य (विददाति) देते हैं (तत्) उन (ज्ञानसागरयतेः) श्री ज्ञानसागर आचार्य के (पदयोः) चरणों में (नमः अस्तु) मेरा नमस्कार हो।

**मालिनी दन्द-**

**सुनयकमलचन्द्रं विश्वशान्त्यैकमन्त्रं**
**विविधविबुधमान्यं चित्तभूपुण्यधान्यम्।**
**भवजलजतुषारं मूर्तिमध्यात्मसारं**
**वृणु सुगुणमगम्यं ज्ञानसूरिं प्रणम्य॥ ९॥**

**अन्वयार्थ**- सुनयरूपी कमल को खिलाने के लिये चन्द्रमा के समान, विश्वशान्ति का एक मात्र मन्त्र, अनेक विद्वानों से मान्य, चित्तरूपी पृथ्वी पर उत्पन्न होने वाली पुण्य रूपी धान्यस्वरूप, संसाररूपी कमल को नष्ट करने के लिये तुषार के समान, अध्यात्म की सारभूत मूर्ति श्री ज्ञानसागर आचार्य को प्रणाम करके, उनके इन्द्रियों से अगोचर श्रेष्ठ गुणों का हे भव्य! वरण करो।

## नम्र निवेदन

## 'जिनभाषित' के शुल्क में वृद्धि

'जिनभाषित' के प्रकाशन में व्यय अधिक हो रहा है और आय कम। इसलिए प्रकाशन-संस्थान बड़ी आर्थिक कठिनाई का सामना कर रहा है। पत्रिका का प्रकाशन अखण्ड बनाये रखने के लिए इसके शुल्क में वृद्धि का निर्णय किया गया है, जो इस प्रकार है-

| | | |
|---|---|---|
| 1. आजीवन सदस्यता शुल्क | - | 1100 रु. |
| 2. वार्षिक सदस्यता शुल्क | - | 150 रु. |
| 3. एक प्रति का मूल्य | - | 15 रु. |

वर्तमान आजीवन-सदस्यों से विनम्र अनुरोध है कि वे यदि पत्रिका के सहायतार्थ दान के रूप में 600 रु. की राशि प्रकाशक के पास भेजने की कृपा करें, तो हम उनके अत्यन्त आभारी रहेंगे। धन्यवाद।

**विनीत**
**रतनलाल बैनाड़ा**
**प्रकाशक**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# जिज्ञासा-समाधान

पं. रतनलाल बैनाड़ा

**प्रश्नकर्ता**- सौ. स्मिता दोषी बारामती

**जिज्ञासा**- तीर्थंकरों के छेदोपस्थापना चारित्र होता है या नहीं?

**समाधान**- तीर्थंकर प्रभु के छेदोपस्थापना चारित्र नहीं होता है। श्री उत्तरपुराण पर्व ७४/३१४ में इसप्रकार कहा है- **चतुर्थज्ञाननेत्रस्य, निसर्गबलशालिनः।**
**तस्माद्यमेवचारित्रं, द्वितीयंतुप्रमादिनाम्। ३१४।**

**अर्थ**- मनः पर्यय ज्ञानरूपी नेत्र को धारण करने वाले और स्वाभाविक बल से सुशोभित, उन तीर्थंकर प्रभु के पहले सामायिक चारित्र ही था, क्योंकि दूसरा छेदोपस्थापना चारित्र प्रमादी जीवों के होता है।

२. श्री आदिपुराण २०/१७१ में भी कहा है:-
**अप्रतिक्रमणे धर्मे जिनाः सामायिका द्वये।**
**चरन्त्येकयमे प्रायश्चतुर्ज्ञान विलोचनाः ॥१७१॥**

**अर्थ**- मति, श्रुत, अवधि और मनः पर्यय इन चार ज्ञानरूपी नेत्रों को धारण करने वाले तीर्थंकर परमदेव प्रायः प्रतिक्रमण रहित एक सामायिक नाम के चारित्र में ही रत रहते हैं।

**भावार्थ**:- तीर्थंकर भगवान् के मुनि अवस्था में किसी प्रकार का दोष नहीं लगता। इसलिये उनको छेदोपस्थापना चारित्र धारण करने की आवश्यकता नहीं पड़ती । वे केवल सामायिक चारित्र ही धारण करते हैं।

**जिज्ञासा**- ५ प्रकार के मरण के गुणस्थान बताइये।

**समाधानः** श्री भगवती आराधना के आधार से ५ प्रकार मरणों के गुणस्थान इस प्रकार हैं:-

१. बाल बाल मरण-मिथ्यादृष्टि जीव के मरण को बाल-बाल मरण कहते हैं। गुणस्थान प्रथम व द्वितीय।

२. बाल-मरण- अविरत सम्यग्दृष्टि जीव के मरण को बाल मरण कहते हैं। गुणस्थान चौथा।

३. बाल-पंडित मरण- पंचम गुणस्थानवर्ती विरताविरत जीव के मरण को बाल-पंडित मरण कहते हैं।

४. पंडित मरण- चारित्रवान् मुनियों के पंडित मरण होता है। उसके ३ भेद हैं- भक्त प्रत्याख्यान, इंगिनीमरण तथा प्रायोपगमन। गुणस्थान ६ से ११ तक।

५. पंडित-पंडित मरण- केवलीभगवान् का चौदहवें गुणस्थान के अंतिम समय में पंडित-पंडित मरण होता है।

**प्रश्नकर्ता**- पं. नेमिचन्द जी छतरपुर

**जिज्ञासा**- क्या वर्तमान के मुनिराज समाधिमरण पूर्वक देहत्याग कर सर्वार्थसिद्धि में उत्पन्न होकर एक भवावतारी बन सकते हैं?

**समाधानः** स्वर्ग में किन जीवों की कहां तक उत्पत्ति होती है, इस संबंध में सिद्धांतसार-दीपक में इसप्रकार कहा है-

**सौधर्माद्यष्टनाकेषु षट्संहननसंयुताः।**
**यान्ति शुक्रादिकल्पेषु चतुर्षु चान्तिमं बिना॥ १५/२९४॥**
**पंचसंहनना आनताद्येस्वन्यचतुर्षु च।**
**चतुःसंहनना जीवा, गच्छन्ति पुण्यपाकतः। १५/२९५।**
**नवग्रैवेयकेषु त्र्युत्तमसंहननान्विताः।**
**जायन्ते मुनयो दक्षा नवानुदिशनामनि॥ १५/२९६॥**
**अन्त्यद्विसंहननाढ्या यान्ति रत्नत्रयार्जिताः।**
**पंचानुत्तरसंज्ञे चादिसंहननभूषिताः॥ १५/२९७॥**

**अर्थ**- सौधर्मादि आठ स्वर्गों में छहों संहनन वाले जीव उत्पन्न होते हैं। शुक्रादि चार स्वर्गों में (९,१०,११,१२वें) अंतिम संहनन छोड़कर पांच संहनन वाले जीव तथा आनतादि (१३,१४,१५,१६वें)चार स्वर्गों में अंत के दो संहनन छोड़कर शेष चार संहनन वाले जीव पुण्योदय से उत्पन्न होते हैं। नवग्रैवेयकों में तीन उत्तम संहननधारी मुनिराज, नव अनुदिशों में आदि के दो संहननों से युक्त मुनिराज तथा पंच अनुत्तरों में प्रथम संहननवाले मुनिराज उत्पन्न होते हैं।

उपरोक्त प्रमाण से ज्ञात होता है कि सर्वार्थसिद्धि नामक अनुत्तर विमान में केवल वज्रवृषभनाराच नामक प्रथम संहननवाले मुनिराज ही उत्पन्न होते हैं। इस पंचम काल में केवल तीन हीन संहनन (अर्द्धनाराच, कीलक, असंप्राप्ता सृपाटिका) वाले मनुष्य ही होते हैं। अतः वर्तमान के कोई भी मुनिराज सोलहवें स्वर्ग से ऊपर उत्पन्न नहीं हो सकते। अर्थात् सर्वार्थसिद्धि में भी वर्तमान के कोई भी मुनिराज उत्पन्न नहीं हो सकते।

जहाँ तक एक भवावतारी बनने का प्रश्न है, वर्तमान के मुनिराज दक्षिणेन्द्र (यदि उनके क्षायिक सम्यक्त्व नियामक न हो तो), सौधर्म इन्द्र की शचि, सौधर्म इन्द्र के लोकपाल तथा लौकांतिक देव बनकर, वहां से च्युत हो मनुष्य पर्याय प्राप्तकर मोक्ष जा सकते हैं।

**जिज्ञासा**- मिश्र काययोग का स्वरूप समझाइये?

**समाधान**- जब कोई जीव मरकर तिर्यंच या मनुष्य के औदारिक शरीर में उत्पन्न होता है, तब जब तक शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक कार्मण एवं औदारिक वर्गणाओं के द्वारा, जीव के प्रदेशों में जो परिस्पंदन होता है वह औदारिक मिश्र काययोग कहलाता है। गोम्मटसार



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जीवकांड में इस संबंध में इस प्रकार कहा है:-

**ओरालिय उत्तत्थं विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं।**
**जो तेण संप जोगो, ओरालिय मिस्स जोगो सो।२३१॥**

**अर्थ**- औदारिक शरीर जब तक पूर्ण नहीं होता है अर्थात् शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है, तब तक मिश्र है और उसके द्वारा होने वाले योग को औदारिक मिश्रयोग कहते हैं।

मिश्र काययोग तीन होते हैं। उपर्युक्त प्रकार से ही, जब तक वैक्रियिक शरीर की शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक वैक्रियिकमिश्र काययोग तथा आहारक शरीर की शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होने तक आहारकमिश्र काययोग कहलाता है।

निष्कर्ष यह है कि शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने से पूर्व, जब तक कार्मण एवं अन्य शरीर संबंधी वर्गणाओं (दोनों के द्वारा मिलकर) द्वारा आत्म प्रदेशों में परिस्पंदन होता है, उसे मिश्र काययोग कहते हैं।

**प्रश्नकर्ता**- सौ. अर्चना शाह बारामती।

**जिज्ञासा**- क्या लवणसमुद्र के पातालों की गहराई नरक के बिलों तक गहरी है? प्रमाण से बताइये।

**समाधान**- उपरोक्त संबंध में श्री तिलोयपण्णत्ति ४/२४४३ में इसप्रकार कहा है-

**जेट्ठा ते संलग्गा, सीमंत विलस्स उवरिमे भागे।**
**पणसय जोयणबहला, कुड्डा एदाण वज्जमया॥२४४३॥**

**अर्थ**- वे ज्येष्ठ पाताल सीमंतक विल के उपरिम भाग से संलग्न हैं। इनकी वज्रमय दीवारें ५०० योजन प्रमाण मोटी हैं।

**विशेषार्थ:**- रत्नप्रभा नाम की प्रथम पृथ्वी १,८०,००० योजन मोटी है। इसके खर, पङ्क तथा अब्बहुल नाम वाले ३ भाग हैं। ये क्रमशः १६,०००, ८४००० और ८०००० योजन मोटे हैं। लवणसमुद्र की मध्यम परिधि पर जो चार ज्येष्ठ पाताल हैं, वे अब्बहुल भाग में स्थित प्रथम नरक के सीमंतक बिल के उपरिम भाग से संलग्न हैं। और इनसे चित्रा पृथ्वी के उपरिम तल की ऊँचाई १६०००+ ८४०००= १,००,००० (एक लाख) योजन है।

उपरोक्त प्रमाणानुसार लवणसमुद्र के ज्येष्ठ पाताल, प्रथम नरक तक गहरे हैं।

**जिज्ञासा**- वायु पुद्गल है या जीव है?

**समाधान**- इस प्रश्न का समाधान समझने के लिये हमें वायु से संबंधित चार प्रकारों का लक्षण समझना आवश्यक है। जो इसप्रकार है-

१. **वायु**- यह पुद्गल का पिंड है। श्री राजवार्तिक ५/२५ की टीका में इसप्रकार कहा गया है- ''वायु भी स्पर्शादि और शब्दादि पर्याय वाली है क्योंकि उसमें स्पर्श गुण पाया जाता है। खाये हुये अन्न का वात, पित्त, श्लेष्म रूप से परिणमन होता है। वात अर्थात् वायु। इसलिये वायु को भी स्पर्शादिवाला मानना चाहिये।''

जब जल का अग्नि पर गर्भ किया जाता है तब वह हाइड्रोजन+ऑक्सीजन रूप बन जाता है। ये दोनों वायु पुद्गल का पिंड हैं तथा अजीव हैं।

२. **वायुजीव**- जो जीव विग्रह गति से आकर वायु में जन्म लेने वाला है, वह वायुजीव है। यह जीव है चेतन है।

३. **वायुकायिक जीव**- उपर्युक्त वायुजीव, जब वायु में जन्म ले लेता है, अर्थात् वायु को अपना शरीर बनाकर जन्म ले लेता है, उसे वायुकायिक जीव कहते हैं। यह चेतन है।

४. **वायुकाय**- जिस जीव सहित वायु को गर्म कर लिया है या अन्य कारणों से जिसमें से वायुकायिक जीव मरण को प्राप्त हो गये हैं, वह वायु, वायुकाय है। यह अचेतन है।

वास्तव में पृथ्वी, जल, अग्नि तथा वायु ये चारों ही पुद्गल के पिंड हैं। इनमें जो जीव, इनको ही अपना शरीर बनाकर जन्म ले लेते हैं, वे उस कायिक जीव कहलाते हैं। मुनिराज के कमंडलु में जो जल भरा जाता है, वह अचेतन (पुद्गल) है, उसमें जीव नहीं होते। इसी प्रकार चारों (पृथ्वी, जल, अग्नि एवं वायु) के संबंध में समझ लेना चाहिये।

**जिज्ञासा**- क्या केवलज्ञान आत्मा को जानता है?

**समाधान**- केवलज्ञान आत्मा को नहीं जानता है, सच तो यह है कि आत्मा ही केवलज्ञान से जानता है। जानने वाला तो आत्मा ही है। केवलज्ञान स्वयं पर्याय है अतः उसकी दूसरी पर्याय नहीं हो सकती। अर्थात् यदि केवलज्ञान को स्व पर प्रकाशक माना जायेगा तो उसकी एक काल में स्व प्रकाशक और पर प्रकाशक रूप दो पर्यायें माननी पड़ेंगी। किंतु केवलज्ञान स्वयं पर प्रकाश स्वरूप ही एक पर्याय है। केवलज्ञान न तो जानता ही है और न देखता ही है, क्योंकि वह स्वयं जानने व देखने रूप क्रिया का कर्ता नहीं है। अतः ज्ञान को अंतरङ्ग-बहिरङ्ग, दोनों का प्रकाशक न मानकर, ऐसा मानना चाहिये कि जीव स्व और पर का प्रकाशक है। श्री जयधवला १/३२५-२६ में इसप्रकार कहा भी है- ण केवल णाणं जाणइ पस्सइ वा, तस्स कत्तारता भावादो।

1/205, प्रोफेसर्स कॉलोनी, आगरा (उ.प्र.)



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# इष्टोपदेश-भाष्य एवं अध्यात्मयोगी मुनि श्री विशुद्धसागरजी

प्राचार्य पं. निहालचन्द जैन

इष्टोपदेश इक्यावन गाथाओं का यथानाम तथा गुणवाला एक लघुकाय आध्यात्मिक ग्रन्थ है, जो पं. आशाधर जी की संस्कृत टीका के साथ माणिकचन्द्र ग्रन्थमाला मुम्बई से प्रकाशित हुआ था, बाद में इसका तृतीय संस्करण ('मुख्तार' युगवीर और अनुवादक पं. परमानन्द शास्त्री थे), की प्रति अवलोकनार्थ मिली। इसके रचयिता श्री पूज्यपाद स्वामी का उल्लेख श्रवणवेलगोल के शिलालेख में नहीं है, फिर भी कृति अपने महत्त्व को स्वतः ख्यापित करती है। श्री पूज्यपाद स्वामी ५वीं व ६वीं शताब्दी के लब्धप्रतिष्ठ तत्त्व-द्रष्टा आचार्य रहे। आपके गुरु द्वारा प्रदत्त नाम 'देवनन्दी' था, जो प्रकर्ष बुद्धि के धनी और विपुल ज्ञानधारी होने से 'जिनेन्द्रबुद्धि' नाम से भी विश्रुत हुए। बाद में जब से उनके युगलचरण, देवताओं द्वारा पूजे गये बुधजनों के द्वारा वे 'पूज्यपाद' नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हुए।

शक संवत् १३५५ में उत्कीर्ण श्रेवणवेलगोल शिलालेख नं. ४० (६४), १०५ (२५४), एवं १०८ (२५८) में आपका मुक्तकण्ठ ये यशोगान किया गया है। आपको अद्वितीय औषधिऋद्धि के धारक बताया गया है। कहते हैं आपने ऐसा रसायन खोजा था, जिसे पैरों के तलुवों में लेपनकर विदेहक्षेत्र जाकर, वहाँ स्थित जिनेन्द्रभगवान् के दर्शन करने से आपका शरीर पवित्र हो गया था। जिनके चरण धोए जल-स्पर्श से एकबार लोहा भी सोना बन गया था। आप समस्त शास्त्र विषयों में पारंगत थे और कामदेव को जीतने के कारण योगियों ने आपको 'जिनेन्द्रबुद्धि' नाम से पुकारा। आप महान् वैयाकरणी (जैनेन्द्र व्याकरण के रचयिता) थे। श्री जिनसेनाचार्य ने लिखा- ''जिनका वाङ्मय शब्दशास्त्ररूपी व्याकरणतीर्थ, विद्वज्जनों के वचनमल को नष्ट करने वाला है, वे देवनन्दी कवियों के तीर्थंकर हैं। 'विदुषां वाङ्मल ध्वंसि' गुणसंज्ञा से आपको विभूषित किया गया था।

जहाँ, सर्वार्थसिद्धि-आपकी सिद्धान्त में परम निपुणता को, 'छन्दशास्त्र' बुद्धि की सूक्ष्मता को व रचनाचातुर्य को तथा 'समाधिशतक' स्थित-प्रज्ञता को प्रकट करता है, वहाँ 'इष्टोपदेश', आत्मस्वरूप सम्बोधनरूप अध्यात्म की गवेषणात्मक प्रस्तुति है। पूज्य मुनि श्री विशुद्धसागर जी एक अध्यात्म चेता जैनसंत हैं, विषयों से विरक्त परमतपस्वी हैं जिन्होंने इसका भाष्य लिखा और द्रव्यानुयोग आगम ग्रन्थों के सन्दर्भों से युक्त यह 'इष्टोपदेश-भाष्य' जो आपके चिन्तन और अध्यात्म की अतुल गहाराई में उतरकर अनुभूति का शब्दावतार है। मुनिश्री का यही चिन्तन आपके प्रवचनों में मुखर होता है। समताभाव और आडम्बरहीन आपकी सालभर चलने वाली दिनचर्या है। जो भी बोलते हैं- अनेकान्त की तुला पर तौलकर बोलते हैं निश्चय और व्यवहार का समरसी समन्वय आपकी पीयूष वाणी से झरता है। यह मुनि श्री की वाणी का अद्भुत चमत्कार है कि प्रवचन के समय अध्यात्मरसिक श्रोता भाव-विभोर हो सुनता है और एकदम सन्नाटा छाया रहता है। आगम में अल्पज्ञान हो तो विवाद पैदा करता है, यदि तत्त्व की पकड़ दोंनों नयों से भली-भांति की गयी है, और कौन नय कब प्रधान है कब गौण है, इस सापेक्षता को मुनिश्री अपने भेद-विज्ञान विवेक से भली-भांति जानते हैं। कहीं कोई विवाद, शङ्का और संदेह नहीं उठता जब आपकी ज्ञानधारा अविरल प्रवाहित होती है। श्री विशुद्धसागर जी ऐसे दि. जैनसंत हैं जिनकी स्याद्वादवाणीरूपी गंगा, निश्चय और व्यवहार नय-कूलों को संस्पर्शित करती हुई प्रबुद्धजनों के हृदय में उतर जाती है। अध्यात्म के सूक्ष्म भावों को सहजता से व्याख्यापित कर देना केवल पांडित्य से सम्भव नहीं है, वहाँ सम्यक्त्व की शुद्धात्मानुभूति और समत्वभावों की फलश्रुति काम करती है।

इस भाष्यकार संत में मैंने एक निरालेपन 'संत व्यक्तित्व' की झलक देखी है। आज जब एक आचार्य संघ के साधुगण, दूसरे आचार्य संघ के साधु गणों से आत्मीय सौजन्यता नहीं रख पा रहे हैं इतना ही नहीं एक ही कुल के साधुगणों में आत्मीय वात्सल्य दिखाई नहीं देता है, ऐसे में यदि दो संघों के साधुओं में मिलन होता है तो वह एक महोत्सव से कम नहीं लगता। उस मिलन-महोत्सव के क्षणों में श्रावक भी प्रसन्नता का अनुभव करता है। अध्यात्मयोगी विशुद्धसागर जी के दीक्षा गुरु आचार्य श्री विरागसागर जी महाराज हैं परन्तु अपने प्रवचनों में उनकी अटूट श्रद्धा संतशिरोमणि आचार्य विद्यासागर जी



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महाराज के लिए मुखर होती रहती है। वे प्रतिवर्ष आ. विद्यासागर जी का संयमोत्सव वर्ष अपने मंच से मनाते हैं। यह संतसौहार्द मुनि श्री विशुद्धसागर की अध्यात्मचेतना का एक प्रबल पक्ष है। कोई पक्ष व्यामोह नहीं, जहाँ केवल वीतरागता को नमन है- चाहे वे आ. विरागसागर हों या आ. विद्यासागर।

इधर विगत् २० वर्षों से अनेक राष्ट्रीय स्तर की विद्वत्संगोष्ठियाँ अनेक आचार्य/उपाध्याय और मुनियों के पावन सान्निध्य और उनके आशीर्वाद व प्रेरणा से समायोजित हो रही हैं जहाँ देशभर के मनीषी एक मंच पर बैठकर अपने जैनदर्शन/जैनधर्म और श्रावकाचार पर गवेषणात्मक प्रस्तुतियाँ देकर शोधपत्र पढते हैं। परन्तु ऐसी कोई जैन साधुओं और आचार्यों की संगीतियाँ समायोजित नहीं हुई। पिछले ५० वर्षों में, जैसा इतिहास में पढ़ा था कि नालन्दा और तक्षशिला विश्वविद्यालयों में श्रमणसाधुओं की संगीतियाँ हुआ करती थी वे आज दुर्लभ हैं। आज हर संघ के साधुओं की अपनी-अपनी चर्या होती जा रही है और इक्कीसवीं सदी का प्रभाव उनमें घुसपैठ कर रहा है। चाहे वह मोबाइल का प्रयोग हो या विज्ञापन की खर्चीली विधियाँ, वातानुकूलित कक्षों में रहना हो या फ्लश का उपयोग। **अब तो साधु की साधना का एक ही मापदण्ड रह गया है कि वह प्रवचन कला में कितना प्रवीण या निपुण है और श्रोताओं की भीड़ जुटाने में कितना सक्षम है?** मुनि विशुद्धसागर इसके अपवाद हैं। लोग इन्हें लघु विद्यासागर जी तक कहने लगे हैं क्योंकि श्री विशुद्धसागर जी की मुनिचर्या आगमानुकूल निर्दोषचर्या है। शिथिलाचार आपकी चर्या में फटक नहीं पाता और आचार्य श्री विद्यासागर जी के लघु संस्करण हैं और समत्व और वीतरागता के प्राञ्जल-नक्षत्र हैं। जैनसमाज आज बीस, तेरा में विभक्त हो रही है, निश्चय और व्यवहार पक्ष के कारण विभाजित है। उपजाति के आधार पर अपनी पहिचान बनाने में 'गोलापूर्व' जैसे सम्मेलन में शक्ति का विभाजन हो रहा है। इन सभी संकीर्णताओं से अलग खड़े मुनि विशुद्धसागर जी समाज के एकीकरण के लिए अपने अध्यात्म को समर्पित भाव से उपयोग करके आत्मसाधना में निरत हैं।

इष्टोपदेश भाष्य की पाण्डुलिपि पढ़कर मुझे इस प्रज्ञापुरुष की प्रतिभा का आभास हुआ और सिर श्रद्धा से झुक गया। इष्टोपदेश को पढ़कर ऐसा लगता है कि पूज्यपाद स्वामी ने आ. कुन्दकुन्द देव के समयसार, प्रवचनसार आदि अध्यात्मग्रन्थों को आत्मसात् करके ही इसे सृजित किया है। आत्मरसिक स्वाध्यायार्थियों को आत्म-चिन्तन के सरोवर में निमग्न होने के लिए जैसे 'गागर में सागर' भरने की उक्ति चरितार्थ कर दी हो। यह सत्य है कि जब कोई महान् आत्मसाधक साधना के चरमोत्कर्ष पर पहुँच जाता है तो उसकी भावाभिव्यक्ति मानवीय संवेदना के बहुत निकट पहुँच जाती है। अध्यात्म का कठिन रास्ता, उसके लिए सरल बन जाता है। उदाहरणार्थ एक गाथा यहाँ उद्धृत करता हूँ।

**यथा-यथा समायाति, संवित्तौ तत्त्वमुत्तमम्।**
**तथा-तथा न रोचन्ते विषयाः सुलभा अपि॥ ३७॥**

संस्कृत की इस गाथा नं. ३७ का भावपूर्ण सौष्ठव देखें। संवित्ति अर्थात् स्व. पर के भेद-विज्ञान से आत्मा जैसे-जैसे विशुद्ध और प्राज्जल बनती हुई आत्म-विकास करती है वैसे-वैसे ही सहज प्राप्त रमणीय पंचेंद्रिय के विषय उसे अरुचिकर और निःस्वाद लगने लगते हैं। उन विषयों के प्रति उदासीन या अनासक्त भाव जाग्रत होने लगता है। जैसे सूर्यप्रकाश के सामने दीपक का प्रकाश मंद दिखता हुआ तिरोहित सा हो जाता है, उसीप्रकार निजानन्द चैतन्य स्वरूप का भान होने पर उस विराट आत्म-सुख के समक्ष, विषय-भोग के सांसारिक सुख अन्तहीन और बौने दिखने लगते हैं। आत्मसाधक के लिए वे सुख आकर्षित नहीं कर पाते। जिनेन्द्र भगवान् ने निराकुलता को सच्चा सुख कहा है। संसार-सुख देह-भोग का सुखाभास है। जैसे इन्द्रधनुष की सुन्दरता क्षणिक और काल्पनिक है वस्तुतः वह दृष्टिभ्रम का एक उदाहरण है वैसे ही इन्द्रिय-सुख आकुलता को पैदा करने वाला वैसा ही सुख है जैसे शहद लिपटी तलवार की धार को जीभ से चाँटने पर सुख होता है। उस क्षणिक-सुख में वेदना का पहाड़ छिपा होता है। विषय-काम-भोग के सुख वस्तुतः सुख की कल्पना के पर्दे के पीछे खडा दुःख का स्तूप है।

जिसे अध्यात्मरस की मिठास मिलने लगती है वह पदार्थों के सम्मोहन से ऊपर उठ जाता है। वैराग्यभाव से निजनिधि की तलाश में वह आत्म अन्वेषण करता हुआ इष्ट-उपदेश की ओर उन्मुख होता है जो उसका कल्याणकारी होता है। दूसरे शब्दों में जैसे-जैसे इन्द्रिय-भोग से रुचि घटती जाती है। आत्म-प्रतीति उसी अनुपात में बढ़ती जाती है। 'आत्म-संवित्ति' का वैभव कितना विराट और अनन्त



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है, एक गाथा में कह देना यह पूज्यपाद स्वामी की विलक्षण शुद्धात्मानुभूति ही थी।

**वरं व्रतैः पदं दैवं नाव्रतैर्वत नारकं।**
**छाया तपस्थयोर्भेदः प्रतिपालयतोर्महान॥**

जिसप्रकार छाया और धूप शान्ति व कष्ट देने के लिए कारणभूत होते हैं उसीप्रकार व्रतों सहित जीवन स्वर्गादि सुखों के साथ मोक्ष सुख का देने वाला होता है, जबकि व्रतरहित जीवन नरकादि दुःखों को भोगने के लिए अभिशप्त रहता है। अतएव व्रतों का आचरण ही श्रेष्ठकर होता है।

ऐसे अध्यात्मग्रन्थ 'इष्टोपदेश' पर भाष्य लिखना मुनि श्री का अकारण नहीं है। इस रचनाधर्मिता से अन्य भव्य जीवों की कल्याण भावना दूसरे नम्बर पर है, प्रथमतः यह मुनि श्री का अपने भावों को विरक्ति और वीतरागता की ओर उन्मुख करते हुए आत्मस्थ होने का एक सफल पुरुषार्थ है। योगीजन आत्मबल को ज्ञान से सुदृढ़ करते हैं। केवल उक्त दो गाथाओं के भाष्य में मुनि श्री ने अनेक आगम ग्रन्थों के सन्दर्भ देकर अपने चिन्तन को विस्तार दिया है। उन्होंने अपने भाष्य के द्वारा मुमुक्षुजनों और साधकों को इस बात के लिए पक्का कर दिया है कि इन्द्रिय-विषय सुखपराधीन, क्षणिक, अन्तफल दुःखरूप और पाप कर्मविपाकी हैं जबकि आत्म-सुख निराबाध, स्वाधीन, शाश्वत और सदैव सुखरूप रहने वाला है। वह आत्मसुख व्रतरूप संयम के परिपालन से ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुनि समतासागर जी ने इष्टोपदश की गाथाओं पर सरल हिन्दी दोहा लिखकर इसे आचार्य पूज्यपाद की जीवन साधना से उद्भूत एक ज्योतिर्मयी कृति कहा है जिसकी एक-एक पंक्ति में मुक्तिद्वार का दर्शन होता है इष्टोपदेश ग्रन्थ की प्रमुख विशेषताएँ जिन्हें भाष्य के द्वारा खुलासा किया गया है-

१. गूढ़ सैद्धान्तिक विषयों को श्री पूज्यपाद स्वामी ने लोक व्यवहार के पायदान पर अधिष्ठितकर सरल और व्यावहारिक उदाहरणों के द्वारा जीवन से जोड़ा है।

२. प्रत्येक गाथा का भाषासौष्ठव कसा हुआ परन्तु सरल है तथा भाव प्रवणता से भरा है।

३. विचार शोधन के विविध आयामों के माध्यम से जन-जीवन की सांसारिक दुरूहता को सुलझाने में प्रत्येक गाथा एक सूत्र की भांति है जिसमें शब्द कम रहस्य अधिक है।

४. गाथाएँ- वीतरागता का संदेश देती हुईं प्रकाश स्तम्भ की भांति जीवन का मार्ग प्रशस्त करतीं हैं।

५. भाष्य के पहले गाथाओं का हिन्दी पद्यानुवाद, गाथा के अर्थ को सुस्पष्ट करता है।

६. आचार्य पूज्यपाद स्वामी अनेक शङ्काएँ उठाते हैं और उनके समाधान में एक नई गाथा का सृजन करते हुए ग्रन्थ को आगे बढ़ाते हैं। यह ग्रन्थ की शैलीगत विशेषता है। जैसे चिदानन्द स्वरूप की प्राप्ति कैसे होती है- दृष्टान्त द्वारा समझाया कि जिसप्रकार सुवर्ण रूप पाषाण में योग्य उपादानरूप कारण के संबंध से पाषाण सुवर्णमय हो जाता है उसीप्रकार द्रव्यादि चतुष्टय (द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव) के सुयोग्य होने पर निर्मल चैतन्य स्वरूप आत्मा की उपलब्धि हो जाती है।

७. गाथाओं में वैराग्य वर्णन, तत्त्व-चिन्तन समाया हुआ है जो विषयासक्ति में मूर्च्छित पुरुष की मूर्च्छा का भंजनकर स्वरूप प्राप्ति के मार्ग का उद्बोधन देतीं हैं।

८. रोग के समान भोग भी चित्त में उद्वेग उत्पन्न करते हैं।

९. कषायों की मृगमरीचिका तो देखिए कि जैसे-जैसे जीवनकाल बीतता जाता है, आयुक्षय और धनवृद्धि होती जाती है परन्तु धनाभिलाषी लोभी पुरुष धनको, जीवन से ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझता हुआ, जीवन के इष्ट कल्याण के लिए पुरुषार्थ नहीं करता। लोभ कषाय का तीव्र संस्कार कि धन संरक्षण में जीवन ही खो देता है।

१०. आत्मध्यान से अभेदात्मक उपयोग की स्थिर दशा प्राप्त करना और संसार के संकल्प विकल्पों से रहित होकर एवं निरंजन आत्मा का अनुभव करना इस ग्रन्थ का इष्ट लक्ष्य है। आत्मसंसिद्धि के लिए इस ग्रन्थ की आध्यात्मिक संरचना का ताना-बाना बुना गया है। भाष्यकार मुनि श्री विशुद्धसागर जी ने प्रस्तुत भाष्य में आत्म-चिन्तन के फलक पर एक वैचारिक क्षितिज प्रस्तुत किया। मन्थन करके अध्यात्म का नवनीत पाने का एक सफल पुरुषार्थ किया। और गाथाओं के प्रतिपाद्य विषय को अनेक उदाहरणों और सन्दर्भों द्वारा विस्तारित किया है। इस भाष्य को पढ़कर तत्त्व जिज्ञासु निश्चित् ही संयम, तप और त्यागवृत्ति की ओर अभिमुख होता हुआ उस मार्ग पर बढ़ने का आत्मबल जुटाता है जो मोक्षपथ की ओर ले जाता है। आत्म-चिन्तन से कर्म निर्जरा का एक सबल निमित्त साधक को भाष्य



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पढ़कर मिलता है। पूज्यपाद स्वामी ने इसके अलावा समाधितंत्र और तत्त्वार्थसार जैसे स्वतंत्र आध्यात्मिक ग्रन्थों का भी प्रणयन किया जो शब्दों में न्यून होकर भी रहस्य और भावों से भरे हैं। श्री विशुद्धसागर जी ने तत्त्वार्थसार की प्रत्येक गाथा पर स्वतंत्र प्रवचन करते हुए जो अध्यात्मरस छलकाया है वह तो पाठक पढ़कर ही अनुभव कर सकता है। भाष्य में जो इष्टोपदेश गाथाओं की पद्य रचना की गयी है वह प्रसादादि गुणों से युक्त है। अध्यात्मवाणी का संदोहन करके भाष्य की रचना अपने आप में ऐसा ग्रन्थ बना गया जो आत्म-वैभव से परिचित कराता हुआ प्रज्ञा प्रकाश से भरता है। भाष्य का पठन प्रफुल्लित करता है और भव्य जीव के क्षयोपशम को बढ़ाता है। उसका मिथ्यात्व व अज्ञान स्वयमेव छंटता जाता है और सम्यक्त्व की प्राप्ति कराता है, यह लघु समयसार रूप है जो आत्मा की महनीयता को उजागर करता है।

भौतिकवादी भोग संस्कृति के झंझावात में आज संपूर्ण मानवीय सभ्यता डूब रही है। उसको चेतना से कोई लेना देना नहीं। देह की पौद्गलिक माया की मोह गली में भ्रमित हो एवं दिशाहीन होकर मनुष्य भटकाव में जी रहा है। शान्ति पाने के सारे सूत्र उसके हाथ से खिसक गये हैं। संवेदनायें शून्य हो गयी हैं तथा धनार्जन का मायावी भूत उसके सिर पर चढ़कर बोल रहा है। आपाधापी के इस संक्रमणकाल में यह भाष्य, मानवता के जागरण का शंखनाद कर रहा है। यह भाष्य जीवन की दशा सुधारने में और दिव्य दिशा पाने में एक दिक्सूचक की भांति जीवन का श्रेष्ठ आयाम बनेगा ऐसा मेरा विश्वास है। अज्ञ को विज्ञ बनाना इस भाष्य का इष्ट फल है। मुनि श्री विशुद्धसागर जी को अध्यात्मयोगी जो सार्थक विशेषण, नाम के पूर्व अंकित किया गया, वह वस्तुतः आपके व्यक्तित्व की वह दीपशिखा है जिससे एक रोशनी मिलती है सही जीवन जीने की और अध्यात्म के रत्नों को अपने जीवन में संजोने की। इष्टोपदेश भाष्य-द्रव्यानुयोग की एक और अमर कृति बने इस आस्था से समीक्षाकार मुनि श्री के चरणों में विनतभाव से नमोऽस्तु करता है।

**जवाहर वार्ड, बीना (म.प्र.)**

## श्रद्धा/ समर्पण

- श्रद्धा, बुद्धि से परे है लेकिन उसकी विरोधनी नहीं।
- श्रद्धा से अन्धकार में भी जो प्रतीत हो सकता है, वह प्रकाश में संभव नहीं। प्रकाश में सुविधा मिल सकती है पर विश्वास नहीं।
- श्रद्धा, आस्था और अनुराग से अभिषिक्त मन में ही भक्ति का जन्म होता है।

## अनेकान्त मनीषी डॉ. रमेशचन्द्र जैन अभिनंदन ग्रंथ का प्रकाशन

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के द्वारा जैनविद्या के अप्रतिम मनीषी, ६० से अधिक कृतियों के लेखक, संपादक, अनुवादक, पार्श्व-ज्योति के वरिष्ठ संपादक, विगत् ३५ वर्षों से समाज के मध्य उत्कृष्ट प्रवचनकार विद्वान् के रूप में प्रसिद्ध, ३० से अधिक शोधार्थियों को पी-एच.डी. उपाधि हेतु शोध निर्देशन देने वाले, वर्द्धमान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिजनौर (उ.प्र.) के संस्कृत विभागाध्यक्ष के रूप में सुदीर्घ सेवाओं के पश्चात् सेवानिवृत्त, अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् के पूर्व अध्यक्ष अनेकांत मनीषी डॉ. रमेशचन्द जैन, एम.ए. (संस्कृत), जैनदर्शनाचार्य, पी-एच.डी., डी.लिट्. की जैनधर्म-दर्शन-साहित्य-संस्कृति एवं जैन समाज के लिए प्रदान की गई विशिष्ट सेवाओं के सम्मानार्थ अखिल भारतीय स्तर पर अभिनंदन करने का निर्णय अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् ने लिया है। इसके अंतर्गत डॉ. जयकुमार जैन (मुजफ्फरनगर) एवं डॉ. नेमिचन्द्र जैन (खुरई) के संपादन में अनेकान्त मनीषी डॉ. रमेशचन्द जैन अभिनंदन ग्रंथ प्रकाशित किया जा रहा है। इस अभिनंदन ग्रंथ हेतु विद्वानों, श्रेष्ठियों एवं शुभेच्छुओं से शुभकामनाएँ, संस्मरण, व्यक्तित्व-कृतित्व संबंधी लेख तथा डॉ. रमेशचन्द्र जैन के योगदान संबंधी फोटोग्राफ्स् सादर आमंत्रित हैं। फोटोग्राफ्स् समुचित उपयोग के बाद वापिस लौटा दिये जायेंगे।

**संपर्क सूत्र**- डॉ. जयकुमार जैन, ४२९, पटेल नगर, मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)। डॉ. नेमिचन्द्र जैन, पूर्व प्राचार्य, गुरुकुल रोड, खुरई जिला-सागर (म.प्र.)। डॉ. शीतलचन्द्र जैन, प्राचार्य नीलगिरि मार्ग, मानसरोवर, जयपुर (राज.)

**डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन, एल-६५, न्यू इंदिरानगर, बुरहानपुर (म.प्र.)**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# आचार्य श्री विद्यासागर जी एवं उनेक शिष्यों-शिष्याओं की चातुर्मास-भूमि 2007

१. **संत शिरोमणि १०८ आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज,** मुनिश्री समयसागरजी, मुनिश्री योगसागरजी, मुनिश्री प्रसादसागरजी, मुनिश्री प्रशस्तसागरजी, मुनिश्री पुराणसागरजी, मुनिश्री प्रबोधसागरजी, मुनिश्री प्रभातसागरजी, मुनिश्री संभवसागरजी, मुनिश्री अभिनंदनसागरजी, मुनिश्री पद्मसागरजी, मुनिश्री पूज्यसागरजी, मुनिश्री विमलसागरजी, मुनिश्री अनंतसागरजी, मुनिश्री धर्मसागरजी, मुनिश्री शांतिसागरजी, मुनिश्री अरहसागरजी, मुनिश्री मल्लिसागरजी, मुनिश्री सुव्रतसागरजी, मुनिश्री वीरसागरजी, मुनिश्री क्षीरसागरजी, मुनिश्री धीरसागरजी, मुनिश्री प्रशमसागरजी, मुनिश्री महासागरजी, मुनिश्री विराटसागरजी, मुनिश्री विशालसागरजी, मुनिश्री शैलसागरजी, मुनिश्री अचलसागरजी, मुनिश्री पुनीतसागरजी, मुनिश्री अविचलसागरजी, मुनिश्री विषदसागरजी, मुनिश्री धवलसागरजी, मुनिश्री सौम्यसागरजी, मुनिश्री अनुभवसागरजी, मुनिश्री दुर्लभसागरजी, मुनिश्री विनम्रसागरजी, मुनिश्री अतुलसागरजी, मुनिश्री भावसागरजी, मुनिश्री आनंदसागरजी और मुनिश्री सहजसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र बीना बारहा, तह. देवरीकलाँ, जि.-सागर, (म.प्र.) (फोन: ०७५८६-२८०००७)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) संजय मैक्स, (फोन: ९४२५०-५३५२१,) (२) ऋषभ मोदी (९४२५४-५११५३)

२. **मुनिश्री नियमसागर जी,** मुनिश्री उत्तमसागर जी, मुनिश्री वृषभसागर जी, मुनिश्री नेमिसागर जी,

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दिगम्बर जैन मंदिर बड़गाँव, जिला- सांगली (महाराष्ट्र)
- **सम्पर्कसूत्र**-(१) विजय बड़गावे (०२३०-२४७१२०४, ९८२३१-७१२०७)

३. **मुनिश्री क्षमासागर जी,** मुनिश्री भव्यसागर जी, मुनिश्री अभयसागर जी, मुनिश्री श्रेयांससागरजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर गणेशगंज, शाहपुर, जिला- सागर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- अध्यक्ष पं. स्वरूपचंदजी (०७५८२-२८२२५६), मंत्री चंद्रकुमारजी जैन बड़कुल (२८२३५८)

४. **मुनिश्री गुप्तिसागरजी,** (उपाध्याय पद आचार्यश्री विद्यानंदीजी महाराज)।

- **चातुर्मास स्थल**- अतिशय क्षेत्र गोम्मटगिरि, जि-इन्दौर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) नरेन्द्र जैन (९४२५०-६३७०९), (२) विमल लुहाड़िया (९४२५०-८११०४), (३) रंजना दीदी (९९९३९-३९२७७)

५. **मुनिश्री सुधासागर जी,** क्षुल्लक श्री गंभीरसागरजी, क्षुल्लक श्री धैर्यसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दिगम्बर जैन मंदिर, खान्दू कॉलोनी, बांसवाड़ा (राजस्थान)।
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) यशोधर मेहता (९४१४३-०६४०५), (२) पुनीत जैन (९४१४२-९०५६१), फोन: ०२९६२-२५७६२५।

६. **मुनिश्री समतासागर जी,** ऐलक श्री निश्चयसागर जी

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दिगम्बर जैन मंदिर कारंजा (लाड), जिला- अमरावती (महा.)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) हितेश रुईवाले (०७२५६-२२३२५७, ९४२२७-६०६७६)।

७. **मुनिश्री स्वभावसागर जी,** क्षु. श्री प्रशांतसागरजी (गुरु मुनिश्री स्वभावसागरजी)।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर पुसद, जिला- यवतमाळ (महा.)
- **सम्पर्कसूत्र**- प्रभाकर मादसा खणे (०९८२२४-४४९६०)

८. **मुनिश्री सरलसागर जी,** क्षु. देवानंदसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर चंदेरी, जिला- गुना (म.प्र.)।
- **सम्पर्कसूत्र**- गेंदालालजी कठरया (०७५४७-२४३३५७)।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. **मुनिश्री प्रमाणसागर जी,** क्षु. सम्यक्त्वसागरजी (गुरु उपाध्याय ज्ञानसागरजी)।

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर सम्मेदशिखरजी (झारखण्ड)
- **सम्पर्कसूत्र-** (१) छीतरमल पाटनी (०९४३११-४०४१६), (२) नीलेश जैन (०९४३१५-०५९६७)।

१०. **मुनिश्री आर्जवसागर जी,** ऐलक अर्पणसागरजी (गुरु आर्जवसागरजी)

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर दमोह (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र-** (१) श्रेयांस लहरी (९४२५३-६३०४१), (२) राकेश सिंघई (९४२५०-९५९९४)।

११. **मुनिश्री पवित्रसागर जी,** मुनिश्री प्रयोगसागरजी

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर पेंड्रा गाँव, जिला-अनूपपुर (म.प्र.)।
- **सम्पर्कसूत्र-** (१) ताराचंद जैन अध्यक्ष (०७७५१-२२४३०८), (२) नरेन्द्रकुमार जी प्राचार्य (२२४२६३)।

१२. **मुनिश्री चिन्मयसागर जी,** क्षुल्लक श्री सुपार्श्वसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल-** बोराबाद के जंगल में (कोटा-रावतभाटा मार्ग)
- **सम्पर्कसूत्र-** (१) श्री पार्श्वनाथ दि. जैन अतिशय क्षेत्र नसियांजी, दादाबाड़ी कोटा (राज.) (फोन: ०७४४-२५०५२५४, २५००३५) अभय भैया (९४२५३-४८५६२)।

१३. **मुनिश्री पावनसागर जी,** क्षु. सुभद्रसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर विद्याभवन, सहजपुर, जिला-जबलपुर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र-** (१) कन्छेदीलाल जैन अध्यक्ष (०७६२१-२६१११६, ९४२५१-३१५७२)

१४. **मुनिश्री सुखसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर कल्भावी, जिला-बेलगाँव (कर्नाटक)

१५. **मुनिश्री मार्दवसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल-** श्री शांतिनाथ दि. जैन मंदिर, पगारा रोड, सागर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र-** ब्र. सतीश जी (९९२६४-८६६५३)।

१६. **मुनिश्री उत्तमसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर शिरगुप्पी, तह-अथनी, जिला-बेलगाँव (कर्नाटक)
- **सम्पर्कसूत्र-** अप्पासु तराटे (०८३३९-२६५२२७)।

१७. **मुनिश्री प्रशांतसागरजी,** मुनिश्री निर्वेगसागरजी

- **चातुर्मास स्थल-** जैन संतनिवास, गोलगंज, छिंदवाडा (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र-** आलोक जैन (अध्यक्ष) (९३००५-०१८०१), प्रभात जैन (९८२७४-३८३०८), चक्रेश जैन (०७१६२-२४२००६)।

१८. **मुनिश्री विनीतसागरजी,** मुनिश्री चंद्रप्रभसागरजी

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर मलकापुर, जिला-बुलढाणा (महा.)
- **सम्पर्कसूत्र-** सुहास चवरे (९४२२१-८०२६१)

१९. **मुनिश्री निर्णयसागरजी,** मुनिश्री प्रणम्यसागरजी, मुनिश्री चंद्रसागरजी, मुनिश्री सुमतिसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल-** श्री महावीर दि. जैन मंदिर कोतमा, जिला- अनूपपुर (उ.प्र.)।
- **सम्पर्कसूत्र-** कैलाशचंद जी (०७६५८-२३३००९), समाज अध्यक्ष-नवयूलालजी (२३३०६४)।

२०. **मुनिश्री प्रबुद्धसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर, विद्याभवन, पुरानी बजाजी, जबलपुर (म.प्र.)।

२१. **मुनिश्री पुण्यसागरजी,** मुनिश्री नमिसागरजी

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर धारवाड़ (कर्नाटक)।

२२. **मुनिश्री पायसागरजी,**

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर शंकीगट्ट, जिला-बैंगलोर (कर्नाटक)।

२३. **मुनिश्री अक्षयसागरजी,** मुनिश्री सुपार्श्वसागर जी, मुनिश्री नेमीसागरजी।

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर चिंचवाड़, तह.-करवीर, जिला- कोल्हापुर (महा.)।
- **सम्पर्कसूत्र-** विपुल मगद्रुम।

२४. **मुनिश्री अजितसागरजी,** क्षु. विवेकानंदसागरजी

- **चातुर्मास स्थल-** श्री दि. जैन मंदिर महावीर विहार, गंजबासौदा, जिला-विदिशा (म.प्र.)।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- **सम्पर्कसूत्र**- महावीर विहार (०७५९४-२२०४६४), श्रेयमलजी (२२१७९६), सतीशजी (२२२४५१), फोन: ९४२४४-७२३४८, ९४२५४-६४१९६।

२५. **मुनिश्री पुष्पदंतसागरजी,** मुनिश्री कुंथुसागरजी

- **चातुर्मास स्थल**- श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर, बेगमगंज, जिला- रायसेन (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- पद्मचंद जी (९४२५३-५१८५९, ०७४८५-२७२२४९), विजयजी (९४२५४-९३०१९)।

२६. **आर्यिकाश्री गुरुमतिजी,** आर्यिकाश्री उज्ज्वलमतिजी, आर्यिकाश्री चिन्तनमतिजी, आर्यिकाश्री सूत्रमतिजी, आर्यिकाश्री शीतलमतिजी, आर्यिकाश्री सारमतिजी, आर्यिकाश्री साकारमतिजी, आर्यिकाश्री सौम्यमतिजी, आर्यिकाश्री सुक्ष्ममतिजी, आर्यिकाश्री शांतमतिजी, आर्यिकाश्री सुशांतमतिजी, आर्यिकाश्री जागृतमतिजी, आर्यिकाश्री कर्त्तव्यमतिजी, आर्यिकाश्री निष्काममतिजी, आर्यिकाश्री विरतमतिजी, आर्यिकाश्री तथामतिजी, आर्यिकाश्री चैत्यमतिजी, आर्यिकाश्री पुनीतमतिजी, आर्यिकाश्री उमशममतिजी, आर्यिकाश्री ध्रुवमतिजी, आर्यिकाश्री पारमतिजी, आर्यिकाश्री आगममतिजी, आर्यिकाश्री श्रुतमतिजी माताजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री पार्श्वनाथ दि. जैन माझ मंदिर टीकमगढ़ (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- पं. गुलाबचंद्रजी पुष्प (०७६८३-२४३१३८), ब्र. जय निशांत (९४२५१-४१६९७), श्री ज्ञानचंदजी नायक- मंत्री, राजेश चौधरी-अध्यक्ष (२४२५४५, ९४२५४-७४४३१)।

२७. **आर्यिकाश्री दृढ़मतिजी,** आर्यिकाश्री पावनमतिजी, आर्यिकाश्री साधनामतिजी, आर्यिकाश्री विलक्षणमतिजी, आर्यिकाश्री वैराग्यमतिजी, आर्यिकाश्री अकलंकमतिजी, आर्यिकाश्री निकलंकमतिजी, आर्यिकाश्री आगममतिजी, आर्यिकाश्री स्वाध्यायमतिजी, आर्यिकाश्री प्रशममतिजी, आर्यिकाश्री मुदितमतिजी, आर्यिकाश्री सहजमतिजी, आर्यिकाश्री संयममतिजी, आर्यिकाश्री सत्यार्थमतिजी, आर्यिकाश्री सिद्धमतिजी, आर्यिकाश्री समुन्नतमतिजी, आर्यिकाश्री शास्त्रमतिजी, आर्यिकाश्री तथ्यमतिजी, आर्यिकाश्री वात्सल्यमतिजी, आर्यिकाश्री पथ्यमतिजी, आर्यिकाश्री संस्कारमतिजी, आर्यिकाश्री विजितगतिजी, आर्यिकाश्री आप्तमतिजी, आर्यिकाश्री स्वभावमतिजी, आर्यिकाश्री धवलमतिजी, आर्यिकाश्री समितिमतिजी, आर्यिकाश्री मननमतिजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन अटा मंदिर, सावरकर चौक, ललितपुर (उ.प्र.) (फोन: ०५१७६-२७५२०७)
- **सम्पर्कसूत्र**- श्री सुंदरलाल अनौरा (९४५१६-५५१३३), श्री अनिल अंचल (०९४१५१-१२३३३)

२८. **आर्यिकाश्री मृदुमतिजी,** आर्यिकाश्री निर्णयमति जी, आर्यिकाश्री प्रसन्नमतिजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री नेमिनाथ दि. जैन मंदिर इटावा बीना, जिला- सागर (म.प्र.) -४७०११३
- **सम्पर्कसूत्र**- फोन: ९४२५६-९१११५, विभव कोठिया-मंत्री (०७०८०-२२३३३३), अभय सिंघई (९४२५१-७११३८)।

२९. **आर्यिकाश्री ऋजुमतिजी,** आर्यिकाश्री सरलमतिजी, आर्यिकाश्री शीलमतिजी, आर्यिकाश्री असीममतिजी, आर्यिकाश्री गौतममतिजी, आर्यिकाश्री निर्माणमतिजी, आर्यिकाश्री मार्दवमतिजी, आर्यिकाश्री मंगलमतिजी, आर्यिकाश्री चारित्रमतिजी, आर्यिकाश्री श्रद्धामतिजी, आर्यिकाश्री उत्कर्षमतिजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर शाढौरा, जिला-गुना (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- अध्यक्ष- महेश जैन चौबे (०७५४३-२२६५९१, ९४२५७-५९२७६), मंत्री- डॉ. सुनील जैन सिंघई (९४२५७-२०२५७), कोषाध्यक्ष- राकेश जैन (०४२५६-४०३७४, २२६५०६)।

३०. **आर्यिकाश्री तपोमतिजी,** आर्यिकाश्री सिद्धांतमतिजी, आर्यिकाश्री नम्रमतिजी, आर्यिकाश्री विनम्रमतिजी, आर्यिकाश्री अतुलमतिजी, आर्यिकाश्री पुराणमतिजी, आर्यिकाश्री अनुगममतिजी, आर्यिकाश्री उचितमतिजी, आर्यिकाश्री विनयमतिजी, आर्यिकाश्री संगतमतिजी, आर्यिकाश्री लक्ष्यमतिजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर वारा सिवनी (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- ऋषभ जैन (०७६३३-२५३०८०)

३१. **आर्यिकाश्री गुणमतिजी :** आर्यिकाश्री ध्येयमतिजी, आर्यिकाश्री आत्ममतिजी, आर्यिकाश्री संयतमतिजी।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर सिरोंज, जिला- गुना (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- ज्ञानचंदजी सिंघई-अध्यक्ष (०७५९१-२५३४०२), अनूप (२५३३००), जिनेन्द्र कोठा-अध्यक्ष (०७५९१-२५२८८१)

३२. **आर्यिकाश्री प्रशांतमतिजी,** आर्यिकाश्री विनतमतिजी, आर्यिकाश्री शैलमतिजी, आर्यिकाश्री विशुद्धमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर बरुआ, सागर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- संजय कुमार जैन-अध्यक्ष (९४१५५-८८९५१)।

३३. **आर्यिकाश्री पूर्णमतिजी,** आर्यिकाश्री शुभ्रमतिजी, आर्यिकाश्री साधुमतिजी, आर्यिकाश्री विशदमतिजी, आर्यिकाश्री विपुलमतिजी, आर्यिकाश्री मधुरमतिजी, आर्यिकाश्री कैवल्यमतिजी, आर्यिकाश्री सतर्कमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन बड़ा मंदिर हजारीबाग, (झारखण्ड)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) राजकुमार अजमेरा (९४३११-४०४४३), (२) सुनील अजमेरा (०९४३११-४०१७७)।

३४. **आर्यिकाश्री अनंतमतिजी,** आर्यिकाश्री विमलमतिजी, आर्यिकाश्री निर्मलमतिजी, आर्यिकाश्री शुक्लमतिजी, आर्यिकाश्री आलोकमतिजी, आर्यिकाश्री संवेगमतिजी, आर्यिकाश्री निर्वेगमतिजी, आर्यिकाश्री सविनयमतिजी, आर्यिकाश्री समयमतिजी, आर्यिकाश्री शोधमतिजी, आर्यिकाश्री शाश्वतमतिजी, आर्यिकाश्री सुशीलमतिजी, आर्यिकाश्री सुसिद्धमतिजी, आर्यिका सुधारमतिजी, आर्यिकाश्री उदारमतिजी, आर्यिकाश्री संतुष्टमतिजी, आर्यिकाश्री निकटमतिजी, आर्यिकाश्री अमितमतिजी, आर्यिकाश्री निसर्गमतिजी, आर्यिकाश्री अविकारमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन गोल बाजार, डोंगरगढ़, जिला- राजनांदगाँव (छत्तीसगढ़)
- **सम्पर्कसूत्र**- अध्यक्ष-किशोर जैन (९४२५५-६३१६०), निर्मल जैन- मंत्री (९३००७-४९९०१), ०७८२३-२३२०९६।

३५. **आर्यिकाश्री कुशलमतिजी,** आर्यिकाश्री धारणामतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर, करेली (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- कमलेश जैन (९४२५१-६९०६६)

३६. **आर्यिकाश्री प्रभावनामतिजी,** *आर्यिकाश्री भावनामतिजी,* आर्यिकाश्री सदयमतिजी, आर्यिकाश्री भक्तिमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर, रफीगंज, *जिला-* गया (बिहार)
- **सम्पर्कसूत्र**- ब्र. वाणीश्री (९४३१५-५९५३०)

३७. **आर्यिकाश्री आदर्शमतिजी,** आर्यिकाश्री दुर्लभमतिजी, आर्यिकाश्री अंतरमतिजी, आर्यिकाश्री अनुनयमतिजी, आर्यिकाश्री अनुग्रहमतिजी, आर्यिकाश्री अक्षयमतिजी, आर्यिकाश्री अमूर्तमतिजी, आर्यिकाश्री अखंडमतिजी, आर्यिकाश्री अनुपममतिजी, आर्यिकाश्री अनर्घमतिजी, आर्यिकाश्री अतिशयमतिजी, आर्यिकाश्री अनुभवमतिजी, आर्यिकाश्री आनंदमतिजी, आर्यिकाश्री अधिगममतिजी, आर्यिकाश्री अमन्दमतिजी, आर्यिकाश्री अभेदमतिजी, आर्यिकाश्री श्वेतमतिजी, आर्यिकाश्री उद्योतमतिजी, आर्यिकाश्री स्वस्थमतिजी, आर्यिकाश्री गंतव्यमतिजी, आर्यिकाश्री संवरमतिजी, आर्यिकाश्री पृथ्वीमतिजी, आर्यिकाश्री निर्मदमतिजी, आर्यिकाश्री विनीतमतिजी, आर्यिकाश्री मेरुमतिजी, आर्यिकाश्री परमार्थमतिजी, आर्यिकाश्री ध्यानमतिजी, आर्यिकाश्री विदेहमतिजी, आर्यिकाश्री अवायमतिजी, आर्यिकाश्री अदूरमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर पनागर, जिला- जबलपुर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- सुरेन्द्र कटंगी (०७६१-२८०५०८६), अजीत चौधरी (२८०५०८३-८९)

३८. **आर्यिकाश्री अपूर्वमतिजी,** आर्यिकाश्री अनुत्तरमतिजी, आर्यिकाश्री अगाधमतिजी।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर जबेरा जिला- दमोह (म.प्र.)

३९. **आर्यिकाश्री उपशांतमतिजी,** आर्यिकाश्री ओंकारमतिजी, आर्यिकाश्री परममति माताजी, आर्यिकाश्री चेतनमति।
- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर अभाना जिला- दमोह (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- विनोदकुमार मलैया (०७८१२-२१४२५०)

४०. **आर्यिकाश्री अकंपमतिजी,** आर्यिकाश्री अमूल्यमतिजी, आर्यिकाश्री आराध्यमतिजी, आर्यिका अचिन्त्यमति, आर्यिकाश्री अलोल्यमतिजी, आर्यिकाश्री अनमोलमतिजी,



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आर्यिकाश्री आज्ञामतिजी, आर्यिकाश्री अचलमतिजी, आर्यिकाश्री अवगममतिजी।

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर सतना (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- सिद्धार्थ जैन (०७६७२-२३७१७४, ४१६४७४, ९८९३१-४७२२२)

४१. **आर्यिकाश्री सुनयमति जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन बड़ा मंदिर नरवर, जिला- शिवपुरी (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- ममता दीदी (०७४९१-२७२४३१) विनोद जैन (९८९३८-८६५४४, ०७४९१-२७२३९२) सुरेश जैन मारौरा शिवपुरी (०७४९२-२३३३६४)।

४२. **आर्यिका सत्यमति जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर बेदला, उदयपुर (राज.)

४३. **आर्यिका सकलमति जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर, कानपुर, जिला- उदयपुर (राज.)

४४. **एलक दयासागर जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर, महावीर विहार, टीकमगढ़ (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- पं. गुलाबचंदजी पुष्प (०७६८३-२४३१३८), ब्र. जय निशांत (९४२५१-४१६९७), सुभाष वर्मा।

४५. **एलक निशंकसागर जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन पार्श्वनाथ मंदिर विजयनगर, इंदौर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- प्रियदर्शी जैन (९८२६०-८०४९०), ब्र. जिनेश मलैया (०७३१-२५७१८५१), सुगनचंदजी (९४२५३-५०६९७)

४६. **एलक सिद्धांतसागर जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन बड़ा मंदिर सनावद (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- सुधीर जैन (०७२८०-२३३०४०) (९८२६५-३३०४९), प्रकाश जैन (९८२६८-७३६३५), ब्र. नरेन्द्र जैन भारती (९९२६०-५५७५४)।

४७. **एलक संपूर्णसागर जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन बड़ा मंदिर हरिद्वार (उत्तरांचल)
- **सम्पर्कसूत्र**- श्री वर्धमान जैन परिवार, सेक्टर नं. ४, मेल रासीपुर, पिन-२४९४०३/ सुषमा दीदी (९८२७६-६८९१६), दिनेशचंद्र जैन, रविन्द्र जैन (२३०४८२)।

४८. **एलक नग्नसागर जी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर सानोदा, जिला-सागर (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) धर्मेन्द्र जैन (९९८१२-७३९९५), (२) सुधीर जैन (९९९३६-४५५०१), फोन: ०७५८२-२८६६७५।

४९. **क्षु. ध्यानसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर, कलोल (गुजरात)

५०. **क्षु. पूर्णसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन मंदिर हटा, जिला-दमोह (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) विपुल जैन (९३०१५-६२४९३), विवेक जैन (०७६०४-२६२४१९, ०७६०४-२६२८९५)

५१. **क्षु. नयसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री महावीर दि. जैन मंदिर, सुभाषनगर, कलाकुंज आगरा (उ.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- (१) ऋषि जैन (९४५११-६३६३४), (२) महिपाल जैन (९४१२३-३१६२९)

५२. **मुनिश्री समाधिसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन नया मंदिर ललितपुर (उ.प्र.)

५३. **मुनिश्री अनंतानंतसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन नया मंदिर सम्मेदशिखर जी मधुबन, जिला- गिरिडीह (झारखण्ड)

५४. **मुनिश्री मंगलानंतसागरजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री दि. जैन नया मंदिर ब्रजपुर, जिला-पन्ना (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- महेन्द्र जैन (०७७३२-२७३२०४)

५५. **क्षुल्लक दिव्यानंदजी**

- **चातुर्मास स्थल**- श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मंदिर धरमपुरी, जिला-धार (म.प्र.)
- **सम्पर्कसूत्र**- महावीर जैन (९४२५४-५९८१२), निर्मल जैन (९४२५४-५९८११)



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

# समाचार

## गुरु बिना जीवन की शुरुआत नहीं
### मुनिश्री सुधासागर जी

गुरु के बिना जीवन शुरु ही नहीं होता है, इसीलिए गुरु को ब्रह्मा, विष्णु और महेश कहा है। गुरु प्रेरक एवं सर्जक है, जबकि परमात्मा ध्येय है। श्रद्धा को प्रगाढ़ बनाने के लिए परमात्मा का ध्यान करना आवश्यक है क्योंकि परमात्मा ही सर्वशक्तिमान है। गुरु की करुणा शिष्य के लिए मार्ग प्रशस्त करती है। दुनिया में तीर्थंकर भी परम गुरु बनकर हमें दिव्यध्वनि के माध्यम से कल्याणकारी मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करते हैं। जीवन को यदि धन्य बनाना है तो एक सच्चा गुरु बनाना होगा। ऐसा गुरु जो विषयों की आशा से रहित हो। ज्ञान, ध्यान और तप में लीन हो। गुरु को जीवन का दर्पण व संसार की बीमारी से छुटकारा दिलाने वाला वैद्य समझना चाहिए। वैद्य के हाथ से जहर भी पी लेना, लेकिंन अज्ञानी के हाथ से अमृत भी नहीं पीना चाहिए। वैद्य के द्वारा दिया हुआ विष भी गुणकारी होगा। विष ही विष की औषधि है, यह प्रसिद्ध है। मुनिश्री ने बताया कि जब तुम भगवान् के, गुरु के दर्शन करो, तब उनके दर्शन करते-करते आत्मदर्शन जरूर करना। इसी से तुम्हें दर्शन की महत्ता समझ में आयेगी। यह विचार मुनिपुङ्गव श्री सुधासागर जी महाराज ने खांदू कॉलोनी (बांसवाड़ा) स्थित श्री श्रेयांसनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में आयोजित धर्मसभा में व्यक्त किए।

इस अवसर पर अ.भा.दि. जैन शास्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, महामंत्री-प्रा. अरुणकुमार जैन एवं अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् के मंत्री- डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन भारती, बुरहानपुर का समाज की ओर से शॉल, श्रीफल, माल्यार्पण के द्वारा सम्मान किया गया। उक्त तीनों विद्वानों ने मुनिपुङ्गव श्री सुधासागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री गंभीरसागर जी महाराज, क्षुल्लक श्री धैर्यसागर जी महाराज को श्रीफल अर्पित कर उनसे चातुर्मास के मध्य मूलाचार अनुशीलन राष्ट्रीय विद्वत्संगोष्ठी एवं अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् का संयुक्त अधिवेशन आयोजित करने तथा सान्निध्य प्रदान करने हेतु निवेदन किया जिसे मुनिश्री ने समाज के द्वारा उक्त आयोजन के प्रति अपनी सहमति व्यक्त करने पर शुभाशीर्वाद प्रदान किया। संचालन डॉ. कमलेश जैन बसंल के किया।

## श्रावक संस्कार शिविर, विद्वत्संगोष्ठी एवं अधिवेशन

बांसवाड़ा (राज.) स्थित खांदू कॉलोनी में वर्षायोग हेतु विराजित मुनिपुङ्गव श्री सुधासागर जी महाराज (ससंघ) के सान्निध्य में अनेक आयोजन सम्पन्न होंगे। इनमें दिनाङ्क २८ अगस्त को रक्षाबंधन पर्व, दिनांक १६ से २५ सितम्बर तक पर्युषण पर्व एवं विशाल श्रावक संस्कार शिविर, दिनाङ्क २७ सितम्बर को क्षमावाणी पर्व, दिनाङ्क २९ सितम्बर को मुनिश्री का दीक्षादिवस, दिनाङ्क २५ से २७ अक्टूबर तक मूलाचार अनुशीलन चतुर्दश राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी एवं दिनांक २८ अक्टूबर को अ.भा.दि. जैन शास्त्रिपरिषद् एवं अ.भा.दि. जैन विद्वत्परिषद् का द्वितीय संयुक्त अधिवेशन आयोजित किया जायेगा। विद्वत्संगोष्ठी के निदेशक प्रा. नरेन्द्र प्रकाश जैन, फिरोजाबाद एवं संयोजक डॉ. रमेशचन्द्र जैन, बिजनौर एवं डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, बड़ौत होंगे। इस संगोष्ठी में देश के ख्याति प्राप्त ५१ विद्वानों एवं विदुषियों को शोधपत्र वाचन हेतु आमंत्रित किया गया है। संयुक्त अधिवेशन के अध्यक्ष- डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, बड़ौत एवं डॉ. शीतलचन्द्र जैन (प्राचार्य) जयपुर एवं संयोजक- प्रा. अरुणकुमार जैन, ब्यावर एवं डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन, बुरहानपुर होंगे। संगोष्ठी एवं अधिवेशन के पुण्यार्जक सर्वश्री अमृतलाल, नरेन्द्रकुमार, शरदकुमार, संतोषकुमार जैन, खांदू कॉलोनी बांसवाड़ा होंगे।

इसी अधिवेशन के मध्य महाकवि आचार्य ज्ञानसागर पुरस्कार, पूज्य क्षुल्लक श्री गणेशप्रसाद वर्णी स्मृति विद्वत्परिषद् पुरस्कार, गुरुवर्य गोपालदास बरैया स्मृति विद्वत्परिषद् पुरस्कार एवं शास्त्रिपरिषद् के द्वारा प्रदत्त पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे। अधिवेशन में लगभग २५० विद्वानों, विदुषियों एवं पत्रकारों के सम्मिलित होने की संभावना है।

## जैन हैपी स्कूल में स्वतंत्रता दिवस सम्पन्न

बुरहानपुर- पार्श्व-ज्योति मंच द्वारा स्थानीय न्यू इंदिरानगर, पार्ट-बी में संचालित जैन हैपी स्कूल में स्वतंत्रता दिवस समारोह श्री चान्दमल जैन की अध्यक्षता एवं श्री महावीरप्रसाद पहाड़िया के मुख्यातिथ्य में मनाया गया। इस अवसर पर ध्वजारोहण, पी.टी. का प्रदर्शन, श्रीमती इन्द्रा जैन एवं श्री संतोष जैन के निर्देशन में सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये। आभार श्री नरेशचंद जैन ने व्यक्त किया।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

## श्री सेवायतन द्वारा आयोजित चिकित्सा शिविर सम्पन्न

हाल ही में मानव सेवा एवं ग्रामीण विकास के लिए संकल्पित संस्थान 'श्री सेवायतन' द्वारा श्री सम्मेदशिखरजी में आचार्य विद्यासागर आदर्श ग्राम बगदाहा एवं मुनि श्री प्रमाण सागर निरोगी ग्राम विरेनगड़डा, जो श्री सम्मेदशिखरजी तीर्थक्षेत्र के समीप आदिवासी बाहुल्य अत्यंत ही पिछड़ा क्षेत्र है वहाँ के शत प्रतिशत ग्रामीणों की चिकित्सा के लिए 24 जुलाई 2007 को चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया जहाँ करीब 1500 लोगों ने आकर चिकित्सा लाभ लिया। प्रत्येक परिवार को पारिवारिक चिकित्सा कार्ड दिया गया।

श्री सेवायतन द्वारा आयोजित चिकित्सा शिविर में आये हजारों ग्रामीण, जिले के सभी वरीय पदाधिकारी, तथा देश-प्रदेश से आये (दिगम्बर जैन) विशिष्ट जनों को सम्बोधित करते हुए मुनि श्री प्रमाणसागर जी महाराज ने अपने आर्शीवचन में कहा कि हर व्यक्ति को मानव सेवा एवं ग्रामीण विकास के इन कार्यक्रमों में बढ़चढ़ कर पूरी निष्ठा एवं सेवाभाव से आगे आना चाहिए। इस अवसर पर जिला दंडाधिकारी गिरिडीह उपविकास आयुक्त गिरिडीह, एस-पी गिरिडीह ने अपने संबोधन में कहा कि ऐसे महान् कार्यों में जिला प्रशासन सदैव सहयोग करेगा। उन्होंने कहा कि श्री सेवायतन द्वारा सेवाभाव के साथ जो कार्य किये जा रहे हैं वे प्रशंसनीय ही नहीं अनुकरणीय भी हैं। सभा को आस्था टीवी के प्रबंध निदेशक, श्री संतोष सेठी एवं भागचंद पहाड़िया कलकत्ता ने भी संबोधित किया।

**राजकुमार जैन, महामंत्री**
**श्री सेवायतन मधुबन**

## उपाध्याय श्री ज्ञानसागर जी का चातुर्मास जबलपुर में

परमपूज्य सराकोद्धारक उपाध्यायरत्न श्री 108 ज्ञानसागर जी महाराज के ससंघ पावन वर्षायोग की विधिवत् स्थापना संस्कारधानी जबलपुर स्थित जूड़ी तलैया, फूटा ताल में हजारों की जनमेदनी के मध्य की गई।

**पंकज कुमार जैन, मेरठ**

## गुजरात के राज्यपाल ने विवादास्पद विधेयक लौटाया

गुजरात के राज्यपाल नवल किशोर शर्मा ने गुजरात धार्मिक स्वतंत्रता संशोधन विधेयक 2006 को पुनर्विचार के लिए लौटा दिया है। राज्यपाल ने इस विधेयक को संविधान के अनुच्छेद 25 का खुला उल्लंघन करने वाला बताया। उन्होंने राज्य के मुख्यमंत्री नरेन्द्र मोदी से जैन और बौद्धों के विशेष धार्मिक दर्जे का ध्यान रखते हुए विधेयक में उचित परिवर्तन करने के लिए भी कहा। उन्होंने विधानसभा को विधेयक के प्रावधानों में बदलाव करने का निर्देश दिया। श्री शर्मा ने कहा कि अनुच्छेद 25 में उल्लिखित जबरन धर्मातरण से दूर रहने की स्वतंत्रता इस विधेयक से प्रभावित होती है।

गुजरात के राज्यपाल द्वारा उठाये गये इस कदम की जैन समाज ने तीव्र प्रशंसा व खुशी जाहिर की है। जैन समाज के प्रत्येक वर्ग को चाहिए की वह गुजरात के मुख्यमंत्री को पत्र भेजकर राज्यपाल के निर्णय को समर्थन दें तथा राज्यपाल महोदय को आभार पत्र भेजकर धन्यवाद ज्ञापित करें।

**सुनील जैन 'संचय' शास्त्री (नरवां)**

## जैन काशी कारंजा में चातुर्मास मंगल कलश की स्थापना

महाराष्ट्र की धर्मप्रिय नगरी जैन काशी में महत् पुण्योदय से परमपूज्य संत शिरोमणी जैनाचार्य 108 श्री विद्यासागर जी महाराज के परम प्रभावक शिष्य पूज्य मुनिश्री 108 समतासागर जी महाराज तथा 105 ऐलक श्री निश्चयसागर जी महाराज का चातुर्मास मंगल कलश स्थापना समारोह रविवार दिनांक 29 जुलाई 2007 को स्थानीय श्री मूलसंघ चंद्रनाथस्वामी दिगम्बर जैन मंदिर में अतिभव्यता पूर्वक धर्मप्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर श्री भक्तामर स्तोत्रपर पूज्य मुनिश्री 108 समतासागर जी महाराज द्वारा रचित दोहानुवाद और अन्वयार्थ तथा भावार्थ सहित एक सुंदर कृति का विमोचन उपस्थित विशिष्ट कार्यकर्ताओं ने किया। इस कृति को प्रकाशित करने का सौभाग्य श्री रूपेन्द्र मोदी परिवार नागपुर को मिला।

## ब्यावर की धर्मनिष्ठा श्रीमती चन्द्रकान्ता गदिया स्वर्गस्थ

ब्यावर दिगम्बर जैन पंचायत एवं ब्यावर महासभा के अध्यक्ष, ज्ञानोदय तीर्थ क्षेत्र नारेली के उपाध्यक्ष, चैम्बर ऑफ कॉमर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज एवं लघु उद्योग संघ, ब्यावर के यशस्वी अध्यक्ष अजमेर जिले के प्रख्यात उद्योगपति एवं समाजसेवी जिनेन्द्रभक्त श्री शान्तिलाल जी गदिया की



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अतिथि परायणा, वात्सल्यमूर्ति, गुरुभक्त धर्मपत्नी श्रीमती चन्द्रकान्ता गदिया का दिनांक 8 जुलाई 2007 को 72 वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया।

श्रीमती गदिया की देव-शास्त्र-गुरु में अनन्य भक्ति थी, जिनधर्म-प्रभावना का कोई कार्य हो अथवा जनकल्याण की कोई योजना हो, वे उसमें उदार हृदय से अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करती थीं।

**पं. प्रशान्त शास्त्री**

**94, भजन नगर, ब्यावर (राज.)**

गदिया परिवार की ओर से उपर्युक्त दानराशि में से '**जिनभाषित**' को पाँच सौ रुपये का दान प्राप्त हुआ है। धन्यवाद।

**सम्पादक**

## ज्योति बाबू जैन को पी.एच.डी. उपाधि

मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर द्वारा ज्योतिबाबू जैन को 'आचार्य देवसेन की रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन' विषय पर शोध कार्य के लिए पी.एच.डी. उपाधि प्रदान की गई। ज्योतिबाबू जैन ने यह कार्य डॉ. उदयचन्द्र जैन के निर्देशन में सम्पन्न किया।

**डॉ. उदयचन्द्र जैन**

## अमित पड़रिया को राष्ट्रीय दयोदय रत्न अलंकरण

संस्कारधानी जबलपुर के युवा रचनाधर्मी एवं प्रसिद्ध मंच संचालक अमित पड़रिया को आचार्य श्री विद्यासागर जी महाराज के आशीर्वाद से पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं पंच गजरथ महोत्सव पथरिया के अवसर पर 8 मार्च दिन मंगलवार को राष्ट्रीय दयोदयरत्न अलंकरण से विभूषित किया गया। बाल ब्रह्मचारी, प्रतिष्ठाचार्य प्रदीप भैया ने अमित पड़रिया का परिचय प्रदान किया, उन्हें शॉल श्रीफल एवं प्रतीक चिन्ह के माध्यम से सम्मानित किया गया। ज्ञातव्य है कि श्री अमित पड़रिया इस अलंकरण से विभूषित होने वाले सबसे कम उम्र के एकमात्र युवा हैं। उनके अलंकरण से संपूर्ण जैन समाज में हर्ष व्याप्त है।

**शरद जैन, विधायक**

## शास्त्रि परिषद् एवं विद्वत्परिषद् की समाज से अपील

अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन शास्त्रि परिषद् एवं अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद् के दिनांक 4 अक्टूबर, 2006 को उदयपुर (राज.) में परम पूज्य मुनिपुङ्गव श्री सुधासागर जी महाराज के ससंघ सान्निध्य में आयोजित संयुक्त अधिवेशन में समागत समस्त विद्वज्जनों की सम्मतिपूर्वक जो प्रस्ताव पारित किए गये थे तथा समाज के नाम अपील प्रसारित की गयी थी, वह पूर्णतः आगमिक एवं समसामयिक है, समस्त विद्वज्जन/सदस्य इनके परिपालन के प्रति वचनबद्ध हैं। ऐसे प्रस्तावों का अपनी मिथ्याधारणाओं की पुष्टि हेतु इन्दौर (म.प्र.) से श्री हेमन्त काला के द्वारा सम्पादित पुस्तिका 'दिग्विजय' के माध्यम से जो अनवरत अनर्गल विरोध किया जा रहा है वह पूर्णतः अनुचित है एवं समाज को भ्रमित करने वाला है।

अतः हम समाज से अपील करते हैं कि वह दिग्विजय पुस्तिका में लिखे जा रहे कपोलकल्पित वक्तव्यों से भ्रमित न हो। हम सच्चे देव, शास्त्र, गुरु के प्रति निष्ठावान हैं और सदैव बने रहेंगे तथा ऐसी ही अपेक्षा सभी से करते हैं।

उक्त अपील अ.भा.दि. जैन शास्त्रि परिषद् के अध्यक्ष डॉ. श्रेयांसकुमार जैन, बड़ौत एवं महामंत्री प्रा. अरुणकुमार जैन ब्यावर तथा अ.भा.दि.जैन विद्वत्परिषद् के अध्यक्ष डॉ. शीतलचन्द जैन, जयपुर एवं मंत्री डॉ. सुरेन्द्रकुमार जैन, बुरहानपुर न स्वहस्ताक्षरित संयुक्त विज्ञप्ति के माध्यम से की है।

**नरस्याभरणं रूपं, रूपस्याभरणं गुणाः।**
**गुणस्याभरणं ज्ञानं, ज्ञानस्याभरणं क्षमा॥**

''मनुष्य का आभूषण रूप है, रूप के आभूषण गुण हैं, गुण का आभूषण ज्ञान है और ज्ञान का आभूषण क्षमा है।''



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

## अविवाहित युवक-युवती-परिचय सम्मेलन

भारतवर्षीय खण्डेलवाल दि. जैन महासभा के तत्वावधान में अजमेर जिले में प्रथम बार मदनगंज-किशनगढ़ में स्थानीय जैन समाज के सहयोग से श्री दि. जैन ज्ञानोदय नवयुवक मण्डल द्वारा '**अविवाहित युवक-युवती परिचय सम्मेलन**' का भव्य आयोजन दिनांक 7 अक्टूबर 2007, रविवार को आर.के. कम्यूनिटी सेन्टर, जयपुर रोड, मदनगंज में किया जा रहा है।

**इन्दरचन्द पाटनी**
**श्री दि. जैन ज्ञानोदय नवयुवक मण्डल,**
**मदनगंज-किशनगढ़**

भगवान् महावीर संस्थान, कोटा के ट्रस्टी श्री प्रदीप-मीनाक्षी टोंग्या की सुपुत्री श्री चि. अधिश्री टोंग्या (रूही) ने केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड नई दिल्ली (C.B.SE.N. Delhi) से कक्षा दसवी में 90% अंक प्राप्त कर उच्च स्थान प्राप्त किया है। एतदर्थ उनको हार्दिक वधाई।

**हुकुम जैन (काका)**
**भगवान् महावीर संस्थान,**
**दादाबाड़ी, नसियां, कोटा (राज.)**

## श्रावक-श्रेष्ठी श्री रामकिशनजी जैन का निधन

**आचार्य श्री**- के अनन्य भक्तों में दिल्ली के श्रावक-श्रेष्ठी श्री रामकिशन जैन का विशिष्ठ स्थान था। आपके ज्येष्ठ सुपुत्र श्री महावीर प्रसाद जैन आचार्य-संघ में '**माचिस वालों**' के नाम से परिचित हैं। आप वर्ष 1991 में ब्लड कैंसर महारोग से ग्रसित हो गये। बचने की कोई आशा नहीं रही। '**आचार्य श्री**' प्राकृतिक-सौन्दर्य युक्त विश्व-विख्यात अतिशयक्षेत्र 'श्री दिगम्बर जैन सिद्धक्षेत्र' मुक्तागिरी में विराजमान थे। संयोगवश रूग्ण अवस्था में 'श्री सिद्धक्षेत्र' मुक्तागिरी पर उन्हें 'आचार्य श्री' का सुख-शांति का मंगल आशीर्वाद तथा उद्बोधन प्राप्त हुआ। फलस्वरूप उन्होंने जीवन के शेष सोलह वर्ष तक बिना इस भयानक रोग की दवाई तथा इलाज के श्रावक के षट् आवश्यकों को पालन करते हुये धर्म-निष्ठ जीवन व्यतीत किया। तद् उपरान्त 86 वर्ष की आयु में शांत-निराकुल परिणामों सहित सर्व सम्पन्न परिवार जनों से निर्मोही हो, इस मनुष्य पर्याय को सार्थक करते हुये 3 जुलाई 2007 को अन्तिम श्वास ली।

सुनील जैन

# रात में नहीं हो सकेंगी दिल्ली में सिखों की शादियाँ

**➢ दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी का फैसला ➢ रस्म होटलों में नहीं केवल गुरुद्वारे में होगी ➢ सिर्फ एक शाकाहारी भोज**

दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबंधक कमिटी ने फैसला किया है कि अब राजधानी में सिख रात में शादियाँ नहीं कर पाएँगे। शादियाँ होटलों में नहीं, केवल गुरुद्वारों में होंगी। शादी में केवल एक शाकाहारी भोज की व्यवस्था होगी।

गुरुद्वारा कमिटी के महासचिव बलबीर सिंह विवेक विहार ने बताया कि इस महत्त्वपूर्ण फैसले की सूचना देने और रणनीति बनाने के लिए दिल्ली की सभी सिंह सभाओं की बैठक 28 जुलाई को गुरुद्वारा रकाबगंज में बुलाई गई है। दिल्ली में इस समय 337 रजिस्टर्ड सिंह सभाएँ हैं, जो विभिन्न इलाकों में गुरुद्वारों का संचालन करती हैं। इनमें सबसे ज्यादा पश्चिमी दिल्ली में 120, उत्तरी दिल्ली में 91, दक्षिण दिल्ली में 73 और पूर्वी दिल्ली में 53 सभाएँ हैं। उन्होंने बताया कि गुरुद्वारा कमिटी ने महसूस किया कि शादियों में दिखावे के कारण आम सिख पर बोझ बढ़ता जा रहा है। आठ-दस लाख रूपये एक-एक शादी पर खर्च किए जा रहे हैं। सच तो यह है कि भ्रूण हत्या की बुराई भी इसी कारण पैदा हुई है। पंजाब में तो लड़कियों का अनुपात लड़कों की तुलना में काफी कम हो गया है।

उन्होंने बताया कि बैठक में फैसले को लागू करने के तरीकों पर विचार होगा। फैसला लागू करने के लिए स्वयंसेवकों का एक दल भी बनाया जा सकता है, जो लोगों को जाकर समझाएगा। उन्होंने बताया कि इसके बाद दहेज के खिलाफ भी इसी तरह का अभियान चलाया जाएगा।

**नवभारत टाइम्स 13 जुलाई 2007 से 'साभार'**



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

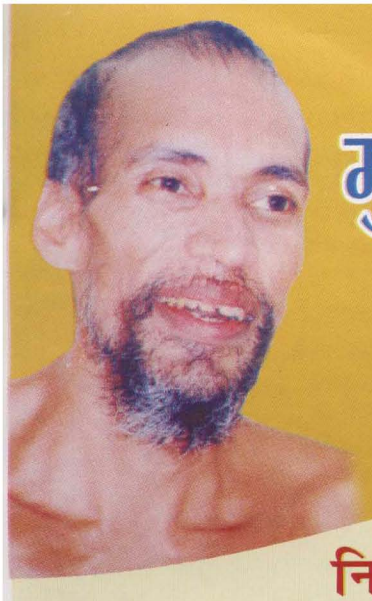

# मुनि श्री क्षमासागर जी की कविताएँ

## निर्लिप्त

चिड़िया जानती है
तिनके जोड़ना
नीड़ बनाना
और बच्चों की
परवरिश करना
बड़े होकर
बच्चे बना लेते हैं
अपना अलग नीड़
वह सहज
स्वीकार लेती है
अकेले रहना
उसे नहीं होती
शिकायत
अपने-पराये किसी से भी
वह भूल जाती है
तमाम विपदाएँ
उसे याद रहता है सदा
गीत गाना / चहचहाना
असीम आकाश में उड़ना
और अपना चिड़िया होना

## प्रतिदान

चिड़िया ने
अपनी चोंच में
जितना समाया
उतना पिया
उतना ही लिया,
सागर में जल
खेतों में दाना
बहुत था।
चिड़िया ने
घोंसला बनाया इतना
जिसमें समा जाए
जीवन अपना
संसार बहुत बड़ा था।
चिड़िया ने रोज
एक गीत गाया
ऐसा जो
धरती और आकाश
सब में समाया
चिड़िया ने सदा सिखाया
एक लेना
देना सवाया।

'अपना घर' से साभार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

रजि. नं. UPHIN/2006/16750

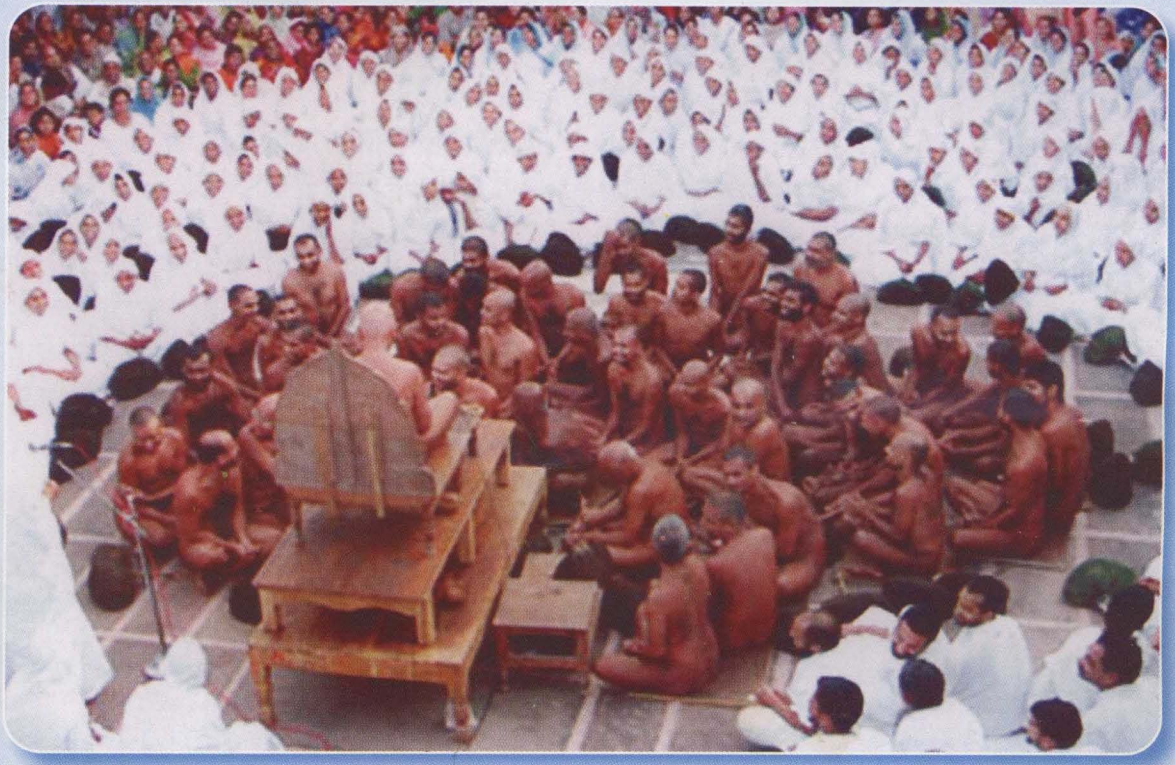

**13 फरवरी 2006 को कुण्डलपुर (म.प्र.) में**
**प.पू. आचार्य श्री विद्यासागर जी द्वारा दीक्षित**
**नव आर्यिकाओं के साथ मुनिसंघ**

**( इस दीक्षा का उल्लेख टाम्स रिवर, यू.एस.ए. की प्रत्यक्षदर्शी विदुषी पर्यटिका, मनैला अन्ने-मारिया पोप ने 'जिनभाषित' अप्रैल 2007 में प्रकाशित 'कुण्डलपुर में दिगम्बर जैन साधु' नामक अपने लेख में किया है।)**

**स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक :** रतनलाल बैनाड़ा द्वारा एकलव्य ऑफसेट सहकारी मुद्रणालय संस्था मर्यादित, 210, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित एवं 1/205 प्रोफेसर कॉलोनी, आगरा-282002 (उ.प्र.) से प्रकाशित। **संपादक :** रतनचन्द्र जैन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org